₹ १००/- वार्षिक

दिव्य जीवन

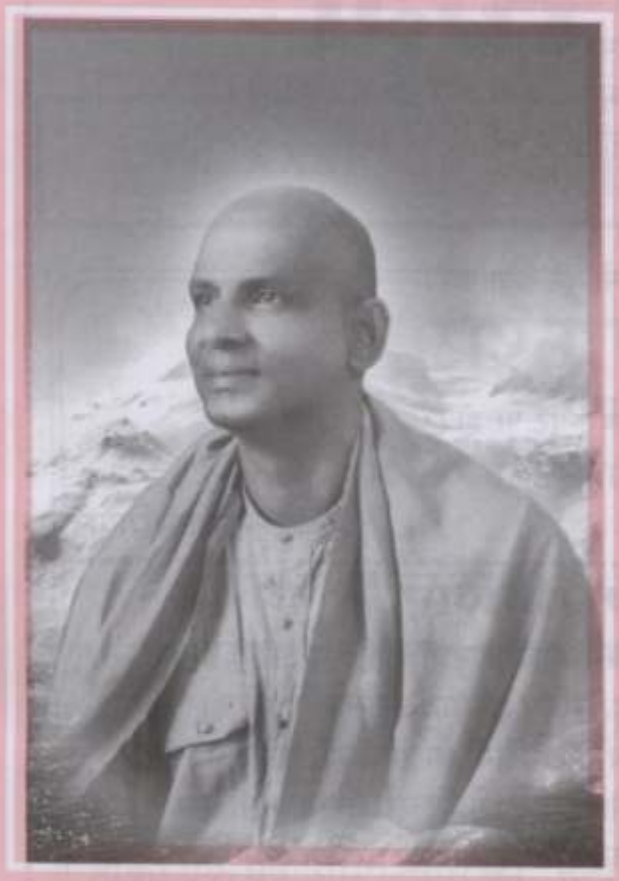

अध्यात्म-रूपी वृक्ष का बीज भगवन्नाम है। यह मन की मलिनता का विनाशक है। यह परम शान्ति, शाश्वत आनन्द एवं अनन्त ज्ञान का प्रदाता है। जो भगवन्नाम का जप करते हैं, उनके हृदय में यह दिव्य प्रेम का संचार करता है। सभी सुखों का यह मूल स्रोत है। अमरत्व-दायक यह भगवन्नाम आप सबको समस्त प्रकार के भयों से मुक्त करे तथा शान्ति एवं परमानन्द प्रदान करे।

—स्वामी शिवानन्द

अक्तूबर २०२०

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्त:शक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

—स्वामी शिवानन्द

सभी से प्रेम कीजिए

सबसे प्रेम कीजिए। शुद्ध बनिए। सबकी आत्म-भाव से सेवा कीजिए। अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखिए। स्वयं पर निर्भर रहिए। ईश्वर की कृपा के लिए अनवरत प्रयास करते रहिए।

स्त्री-पुरुष के बीच कोई भेद न रखिए। जब आप स्त्रियों के साथ हों, तब इस मन्त्र का जप कीजिए—''एक सच्चिदानन्द आत्मा।'' जो आत्मा आपके हृदय में है, वही आत्मा सभी स्त्रियों के अन्दर भी व्याप्त है। लिंग-भावना विलुप्त हो जायेगी। आप उनमें भी ईश्वर का ही दर्शन करेंगे।

अनुभव कीजिए कि भगवान् श्री कृष्ण सभी हाथों से काम करते, सभी आँखों से देखते तथा सभी श्रोत्रों से सुनते हैं। राधा की भाँति गाइए। उनके दर्शन के लिए गोपियों के समान लालायित रहिए। भगवान् कृष्ण की कृपा आप पर अवश्य होगी। वह अमर मित्र हैं। इसको कभी न भूलिए। आप उनका साक्षात्कार करेंगे।

—स्वामी शिवानन्द

दिव्य जीवन

Vol. XXXI	अक्तूबर २०२०	No. 3

प्रश्नोपनिषद्

प्रथम प्रश्न

कबन्धी एवं पिप्पलाद

तान्ह स ऋषिरुवाच भूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं संवत्स्यथ यथाकामं प्रश्नान्पृच्छत यदि विज्ञास्यामः सर्वं ह वो वक्ष्याम इति ।।२ ।।

२. उन ऋषि ने उनसे कहा, 'आप तपस्या, ब्रह्मचर्य एवं श्रद्धा से युक्त होकर एक वर्ष और निवास करें, तत्पश्चात् अपनी इच्छानुसार प्रश्न करें, यदि मैं आपके पूछे गये विषय में जानता होऊँगा तो आपको सब बतला दूँगा।'

(पूर्व–अंक से आगे)

महागुरुवर्णमातृकास्तोत्रम्

MAHAGURU-VARNA-MATRIKASTOTRAM

(ज्ञानभास्कर महामहोपाध्याय श्री एस. गोपाल शास्त्री)

घण्टारम्यरवं घनाभमुरलीधार्येंघ्रिपद्माश्रयम्
घोरामर्षमदादिवारणहरिं कौटिल्यहीनाशयम् ।
चन्द्राभास्यगलद्दरस्मितसुधासंतृप्तभक्तावलिम्
छद्मापेतगुणच्छटाश्चितगुरुच्छत्राधिपं भावये ।।१३।।

१३. मैं गुरुवृन्द के अधिपति श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का भावपूर्वक ध्यान करता हूँ जो समस्त सद्गुणों से विभूषित हैं, जिनकी वाणी घण्टाध्वनि के समान रम्य है, जिन्होंने मुरलीधर मेघश्याम के पावन चरणकमलों का आश्रय ग्रहण किया है, जो क्रोध, मद आदि विकारों रूपी हाथियों के लिए एक सिंह के समान हैं, जिनका अन्तःकरण कुटिलतारहित अर्थात् परम पावन है तथा जो अपने चन्द्रसम उज्ज्वल मुख पर थिरकती मधुर स्मित रूपी सुधा से भक्तों को अत्यधिक आनन्द प्रदान करते हैं।

जात्यासिद्धमनोज्ञचाटुवचसा जेत्रा समस्तेन्द्रिय–
व्रातस्यामलचेतसा झटिति सद्बुद्धिप्रदात्रा नृणाम् ।
झंझामारुतवन्निरर्गलगिरा विज्ञानपाथोधिना
प्रज्ञाशेवधिनाऽभिवन्द्यगुरुणा धन्या वयं वीक्षिताः ।।१४।।

१४. जो जन्मतः सरस एवं मनोहारी वाणी से सम्पन्न हैं, जो इन्द्रियजयी एवं पवित्रहृदयी हैं, जो मनुष्यों को तत्क्षण सद्बुद्धि प्रदान करते हैं, जिनके मुख से सदुपदेश प्रचण्ड वायु के समान शक्तिशाली एवं धाराप्रवाह रूप से प्रवाहित होते हैं, जो ज्ञान के सागर एवं प्रज्ञा के भण्डार हैं, ऐसे सद्गुरुदेव का दर्शन एवं आशीर्वाद प्राप्त करने वाले हम सब धन्य हैं ।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

दुर्गा पूजा सन्देश :

देवी–उपासना[१]

(सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज)

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते।।

हे देवी नारायणी! आप सर्वमङ्गल प्रदान करने वाली मङ्गलमयी हैं, आप कल्याणदायिनी शिवा हैं, आप सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, त्रिनेत्रा एवं गौरी हैं। आपको श्रद्धापूर्वक प्रणाम है।

देवी से अभिप्राय अस्तित्वगत एक दिव्य शक्ति है जो ब्रह्माण्ड का सृजन, पालन एवं लय करती है। वस्तुत: देवी–उपासना किसी सम्प्रदाय अथवा वर्ग विशेष से सम्बन्धित नहीं है जैसा कि सामान्यतया माना जाता है। जनमानस की यह धारणा भी उचित नहीं है कि देवी भगवान् विष्णु अथवा भगवान् शिव के विरुद्ध एक शक्ति है। देवी अथवा शक्ति से तात्पर्य अस्तित्व–सम्बन्धी शक्ति के समस्त प्रकारों से है यथा ज्ञान की शक्ति, सर्वज्ञता–सर्वसमर्थता–सर्वव्यापकता की शक्ति। ये शक्तियाँ भगवान् के दिव्य लक्षण अथवा गुण हैं, आप उन्हें भगवान् विष्णु अथवा भगवान् शिव अथवा इच्छानुसार अन्य कुछ कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में शक्ति एक परम तत्त्व के विभिन्न रूपों में प्रकट होने की अथवा भगवान् द्वारा सृष्टि की रचना की सम्भावना की परिचायक है। भगवान् सृष्टि–शक्ति द्वारा इस विश्व का सृजन, स्थिति–शक्ति द्वारा इसका पालन तथा संहार–शक्ति द्वारा इसका संहार करते हैं। 'शक्ति' तथा शक्तियुक्त 'शाक्त' अर्थात् भगवान् एक हैं, इन्हें पृथक् नहीं किया जा सकता है। भगवान् एवं शक्ति, अग्नि तथा अग्नि की उष्णता के समान अभिन्न हैं।

अत: देवी–उपासना अथवा शक्ति–उपासना भगवान् की सर्वोच्चता, महानता एवं दिव्यता की आराधना है। यह सर्वशक्तिमान् प्रभु की ही आराधना है। यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है कि देवी को हिन्दुओं की एक रक्त–पिपासु देवी माना जाता है। नहीं, यह सत्य नहीं है। देवी केवल हिन्दुओं की नहीं हैं, वस्तुत: वे किसी धर्म से सम्बन्धित नहीं हैं और न ही उनका स्त्री स्वरूप है ; देवी परमात्मा की चैतन्य शक्ति हैं। इस सत्य को नहीं भूलना चाहिए। देवी अथवा शक्ति शब्द तथा इससे सम्बन्धित स्वरूपों की धारणाएँ मनुष्य के सीमित ज्ञान को दी गयी स्वीकृति मात्र हैं। ये शक्ति की वास्तविक तथा अन्तिम परिभाषाएँ नहीं हैं। शक्ति का मूल स्वरूप मनुष्य के बोध से परे है। भगवान् श्री कृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं, ''यह मेरी अपरा प्रकृति

१. 'द डिवाइन लाइफ' १९४९ में प्रकाशित आलेख का अनुवाद

(शक्ति) है, इससे परे मेरी परा प्रकृति (मूल शक्ति) है जो इस ब्रह्माण्ड को धारण करती है।'' उपनिषद् कहते हैं, ''भगवान् की परा-शक्ति का विभिन्न रूपों में वर्णन किया जाता है। यह शक्ति भगवान् का ही स्वरूप है जो ज्ञान, बल एवं क्रिया के रूप में अभिव्यक्त होती है।'' वास्तव में सृष्टि के समस्त प्राणी शक्ति-उपासक ही हैं क्योंकि यहाँ कोई ऐसा प्राणी नहीं है जो शक्ति के किसी न किसी प्रकार से प्रेम नहीं करता है तथा उसे प्राप्त करने की इच्छा नहीं करता है। अब वैज्ञानिकों एवं भौतिक शास्त्र-वेत्ताओं ने यह प्रमाणित कर दिया है कि इस ब्रह्माण्ड में सब कुछ विशुद्ध अक्षय ऊर्जा ही है। यह ऊर्जा दिव्य शक्ति का ही एक रूप है जो सृष्टि के प्रत्येक प्राणी में वास करती है।

शक्ति की उसके मूल स्वरूप में आराधना-उपासना नहीं की जा सकती है, अत: सृष्टि-स्थिति-संहार कारिणी के रूप में उसकी उपासना की जाती है। शक्ति अपने इन तीन रूपों में देवी सरस्वती, देवी लक्ष्मी एवं देवी काली कही जाती है। जैसा कि स्पष्ट है कि ये तीन पृथक् देवियाँ नहीं हैं अपितु एक निराकार देवी अथवा शक्ति की ही इन तीन रूपों में उपासना की जाती है। इसी प्रकार ब्रह्मा-विष्णु-महेश भी त्रिदेव नहीं हैं, वे एक निराकार परम देव अथवा परम तत्त्व के ही तीन रूप हैं। नवरात्रि देवी भगवती के इन तीन रूपों—महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती की आराधना करने का पावन अवसर है। देवी सरस्वती वैश्विक प्रज्ञा, वैश्विक चैतन्य तथा वैश्विक ज्ञान हैं। बुद्धि की शुद्धि, विवेक के उदय, विचार शक्ति की जाग्रति तथा आत्मज्ञान प्राप्ति हेतु उनकी उपासना आवश्यक है। लक्ष्मी से तात्पर्य मात्र भौतिक धन-सम्पत्ति, स्वर्ण इत्यादि नहीं है। समस्त प्रकार की समृद्धि, वैभव, भव्यता, महानता, उत्कर्ष एवं आनन्द देवी लक्ष्मी के स्वरूप हैं। श्री अप्पय्य दीक्षितार मोक्ष को भी 'मोक्षसाम्राज्य लक्ष्मी' कहते हैं। अत: देवी लक्ष्मी की उपासना से तात्पर्य जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष की उपासना है। महाकाली वह दिव्य शक्ति हैं जो नानात्व का एकत्व में लय करती हैं। इस प्रकार देवी-उपासना आध्यात्मिक साधना की सम्पूर्ण प्रक्रिया की व्याख्या प्रस्तुत करती है।

नवरात्रि के समय विविध अनुष्ठान करिए तथा अपने अन्त:करण को पवित्र बनाइए। यह माँ पराशक्ति की आराधना करने का सर्वाधिक शुभ अवसर है। श्री दुर्गासप्तशती अथवा देवी माहात्म्य एवं श्री ललितासहस्रनाम का पाठ करिए। देवी भगवती के पावन मन्त्र का जप करिए। पवित्रता एवं भक्तिभावपूर्वक उनकी पूजा करिए। उनका दर्शन प्राप्त करने के लिए उन्हें हृदय से पुकारिए। माँ भगवती आपको परम ज्ञान तथा शाश्वत शान्ति एवं आनन्द से आशीर्वादित करेंगी। भगवती पराशक्ति के अनुग्रह आप सब पर हों।

ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:।

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

देवीमाहात्म्य का सार[१]

(परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज)

हिन्दू धर्म में भक्तवृन्द का एक वर्ग है जो परम पुरुष की भगवान् शिव के रूप में आराधना करता है, उन्हें शैव कहा जाता है। परम पुरुष की भगवान् विष्णु के रूप में उपासना करने वाले वैष्णव कहलाते हैं। एक तीसरा वर्ग है जो परम तत्त्व की 'महादेवी' अथवा 'शक्ति' के रूप में आराधना करता है, इन्हें शाक्त कहा जाता है। इनके अतिरिक्त तीन अन्य सम्प्रदाय हैं—गाणपत्य, सौर्य एवं कौमार। गाणपत्य सम्प्रदाय के भक्त परम पुरुष की गणपति के रूप में पूजा करते हैं; सौर्य उस परात्पर तत्त्व की एक दिव्य प्रकाश-पुंज 'सूर्य' के रूप में उपासना करते हैं जो हमारे इस जगत् को प्रकाश एवं जीवन प्रदान करते हैं। कौमार सम्प्रदाय के अनुयायी उसी परम सत्ता की भगवान् स्कन्द के रूप में आराधना करते हैं। इस प्रकार हिन्दुओं में छः मुख्य सम्प्रदाय हैं जो 'एकमेव अद्वितीयम्' परम तत्त्व की छः विभिन्न स्वरूपों में उपासना करते हैं।

नवरात्रि में की जाने वाली देवी-उपासना मुख्यतः शाक्त उपासना है जो हमें शाक्त-परम्परा से प्राप्त हुई है। उनका सर्वोच्च सद्ग्रन्थ श्री दुर्गासप्तशती अथवा देवीमाहात्म्य है जिसमें माँ पराशक्ति की दिव्य महिमा का गान किया गया है। इसे सप्तशती इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसमें ७०० श्लोक हैं।

यह दिव्य-ग्रन्थ देवी भगवती एवं उनके स्वरूप से सम्बन्धित गहन दार्शनिक सत्यों से परिपूर्ण है। इसमें जगज्जननी का गुणगान करती उत्कृष्ट एवं दिव्य स्तुतियाँ हैं तथा उन्हें प्रसन्न करने की साधन-विधियों सम्बन्धी मार्गदर्शन भी दिया गया है। शाक्त उपासना एवं साधनाभ्यास में श्री दुर्गासप्तशती का सम्पूर्ण पाठ करना स्वयं में एक महान् एवं प्रभावशाली साधना है। अब हम इस महान् ग्रन्थ के सार के विषय में जानेंगे।

भगवान् श्री राम ने सूर्यवंश में जन्म ग्रहण किया था। इसी सूर्यवंश में जन्मे सुरथ नामक राजा शत्रुओं द्वारा पराजित होने पर अपने राज्य को छोड़ने हेतु विवश हो जाते हैं। वे एक वन में आश्रय लेते हैं। अपने समस्त वैभव, धन-सम्पदा एवं परिजनों से पृथक् हो कर राजा सुरथ अत्यन्त दुःखी एवं व्यथित हैं; वे अत्यन्त दयनीय एवं असहाय अवस्था में वन में एकाकी भटक रहे हैं। उनका मन पुनः-पुनः अपनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के विषय में सोचता है; वे निरन्तर अपने राज्य, सम्पत्ति एवं मन्त्रियों के विषय में विचार करते हैं तथा यह सोचकर चिन्तित होते हैं कि अब नये शासक द्वारा उनके राज्य का किस प्रकार संचालन किया जा रहा है। ऐसी व्यथित मनोदशा में वे मेधा नामक एक आत्म-साक्षात्कार प्राप्त ऋषि के आश्रम के समीप पहुँचते हैं। वे उन महान् ऋषि के शिष्यवृन्द को देखते हैं तथा उस आश्रम के सौन्दर्य को निहारते हैं जहाँ प्रत्येक वस्तु परिपूर्ण शान्ति एवं पवित्रता से परिव्याप्त है। वे वहीं निवास करने लगते हैं।

इस आश्रम-प्रवास के समय उनकी भेंट एक अन्य दुःखी मनुष्य से होती है जिसका नाम समाधि है। समाधि वैश्य जाति के हैं तथा वे भी दुर्भाग्यवशात् अपने घर से निकाले गये हैं। उनके अपने सम्बन्धियों-परिजनों ने ही उनकी सम्पत्ति को छीनकर उन्हें घर से निकाल दिया है। इसलिए वे वन में भटक रहे हैं। समाधि भी उन ऋषि के चरणों का आश्रय ग्रहण कर लेते हैं।

राजा सुरथ एवं समाधि वैश्य अनुभव करते हैं कि उन दोनों की दशा समान है क्योंकि दोनों को ही उनके स्वजनों ने गृह एवं सम्पत्ति से वंचित किया है। वे दोनों यह सोचकर अत्यन्त व्यग्र एवं चिन्तित हैं कि अपने सम्बन्धी जनों के द्वेष, शत्रुता एवं निर्दयतापूर्ण व्यवहार के बावजूद उनका मन उन्हीं व्यक्तियों एवं वस्तुओं की ओर बार-बार

१. द डिवाइन लाइफ' १९६९ में प्रकाशित आलेख का अनुवाद

क्यों जाता है जो उनके दु:ख, कष्ट एवं निराशा के कारण हैं।

वे इस विषय में परस्पर चर्चा करते हैं कि मन का यह कैसा रहस्यमय स्वभाव है कि यह उन्हीं व्यक्तियों एवं वस्तुओं का बार-बार चिन्तन करता है जिनसे उसे कष्ट एवं पीड़ा ही प्राप्त हुए हैं। इस समस्या का समाधान करने में स्वयं को असमर्थ जानकर वे दोनों ऋषि मेधा के पास जाते हैं तथा उनसे विनम्र प्रार्थना करते हैं कि वे इस विषय पर कुछ प्रकाश डालें। वे ऋषि से कहते हैं, ''हे ऋषिवर! हम दोनों यह देखकर अत्यधिक उद्वेलित हैं कि हमारा यह मन अभी तक उन व्यक्तियों-वस्तुओं के प्रति अत्यधिक आसक्त है जिनसे इसे अत्यन्त गहन पीड़ा एवं दु:ख प्राप्त हुआ है; यह जानता है कि वहाँ सुख नहीं है फिर भी यह उनके प्रति आसक्ति का त्याग नहीं करता है। इसका क्या कारण है? मन की यह विचित्र भ्रान्ति क्या है? कृपया इस सम्बन्ध में हमारा मार्गदर्शन करिए।''

यद्यपि यह प्रश्न राजा सुरथ एवं वैश्य समाधि द्वारा पूछा गया है, परन्तु यह एक सार्वभौमिक प्रश्न है जो सम्पूर्ण विश्व के समस्त विचारशील नर-नारियों को उद्वेलित करता है। इस प्रश्न के उत्तर में ही ऋषि मेधा देवीमाहात्म्य की अद्भुत व्याख्या करते हैं। वे कहते हैं, ''हे मेरे बालको! मनुष्य के मन में एक रहस्यमय भ्रान्ति होती है जिसके कारण उसकी बुद्धि एवं विवेक आवृत हो जाते हैं तथा वह पुन:-पुन: उन्हीं व्यक्तियों एवं वस्तुओं के प्रति आसक्त होता है जो उसके दु:ख एवं कष्ट के कारण हैं। यह भ्रान्ति, यह आवरण वस्तुत: माँ भगवती की रहस्यमय शक्ति है। वे वैश्विक माया हैं। वे ही इस ब्रह्माण्ड के सृजन का माध्यम हैं। उनकी इस रहस्यमय आवरणशक्ति के कारण ही एक परात्पर तत्त्व अनेक हुआ प्रतीत होता है, निराकार विभिन्न रूप-आकार युक्त तथा अव्यक्त व्यक्त हुआ प्रतीत होता है। यह रहस्यमय शक्ति परम तत्त्व की अनिर्वचनीय शक्ति है। यह ब्रह्म-शक्ति है, यह महामाया है जो स्वयं भगवान् से उत्पन्न होती है तथा इस शक्ति के माध्यम से ही भगवान् ब्रह्माण्ड के सृजन, पालन एवं पुन: शुद्ध अस्तित्व की अनुभवातीत अवस्था में विलीनीकरण रूपी वैश्विक नाटक का संचालन करते हैं।

राजा सुरथ एवं वैश्य समाधि ऋषि मेधा द्वारा वर्णित इस रहस्यमय शक्ति, वैश्विक शक्ति के विषय में और अधिक जानने की इच्छा प्रकट करते हैं जो इस समस्त सृष्टि के उद्भव का हेतु है। उनके अनुरोध पर ऋषि मेधा माँ भगवती के स्वरूप की विस्तृत व्याख्या करते हैं, 'देवीमाहात्म्य' ग्रन्थ में यही विशद व्याख्या समाहित है। माँ पराशक्ति के दिव्य स्वरूप के रहस्य का प्रतिपादन करने के पश्चात्, ऋषि मेधा सुरथ एवं समाधि को देवी की आराधना करने, उनसे प्रार्थना करने तथा उन पर ध्यान करने का उपदेश देते हैं जिससे वे उनका अनुग्रह प्राप्त कर सकें। सुरथ एवं समाधि ने ऋषि के उपदेश का अक्षरश: पालन किया तथा माँ पराशक्ति का अनुग्रह प्राप्त किया।

नवरात्रि के शुभ अवसर पर आद्यशक्ति की बाह्य आराधना-उपासना करते समय हम सबको स्वयं को यह पुन:-पुन: स्मरण कराना चाहिए कि उन जगज्जननी की उस करुणापूर्ण-विनाशक शक्ति के प्रति आन्तरिक निष्ठा ही उनकी सच्ची आराधना है जिसके माध्यम से वे हमारे अशुद्ध व्यक्तित्व को नष्ट करके हमें एक उज्ज्वल दिव्य व्यक्तित्व प्रदान करती हैं। हमें यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि उन संहारकारिणी दुर्गा-शक्ति के प्रति हमारी आन्तरिक निष्ठा एवं आन्तरिक सहयोग ही जगन्माता की वास्तविक उपासना है जो हमारे अहंकार एवं दुर्गुणों-दोषों के नाश का कार्य करती हैं ताकि हम अपने पवित्र अन्त:करण द्वारा दिव्य जीवन के पथ पर चलकर अमृतत्व एवं दिव्य परिपूर्णता प्राप्त कर सकें। आइए, हम सब उन जगदम्बा से करबद्ध प्रार्थना करें कि वे हमें आन्तरिक बल एवं शक्ति से आशीर्वादित करें जिससे कि हम उनके पावन चरण-कमलों में स्वयं को पूर्णतया समर्पित कर सकें तथा हमारे पशुत्व के नाश एवं दिव्य-ज्योति प्राप्ति के कार्य में, हमारे उद्धार के कार्य में उन्हें अपना सहयोग दे सकें।

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

तिरेसठ नयनार सन्त :

एरीपाथा नयनार

(परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज)

एरीपाथा नयनार का जन्म चोला राज्य के मुख्य नगरों में से एक करुवुर नामक नगर में हुआ था। अम्बिरावती नदी के तट पर स्थित यह एक अत्यन्त पावन स्थल था। इस नदी के दोनों तटों पर सन्त-महात्मा तपस्या में लीन रहते हुए आध्यात्मिक स्पन्दनों का प्रसारण करते थे। यहाँ भगवान् पशुपतीश्वर का एक सुप्रसिद्ध मन्दिर भी था, जहाँ से भगवान् पशुपतीश्वर वहाँ के राजा और प्रजा पर समान रूप से निरन्तर कृपावृष्टि करते थे। सभी जन अत्यन्त सुखी थे और प्रसन्न रहते थे। एरीपाथा नयनार प्रतिदिन अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति सहित भगवान् पशुपतीश्वर की पूजा-अर्चना किया करते थे। शिव-भक्तों की सेवा करना और उनकी हर प्रकार से रक्षा करना इनके जीवन का उद्देश्य था; अतः वे सदैव अपने साथ एक अस्त्र और कुल्हाड़ी रखा करते थे। जो कोई भी किसी शिव-भक्त को हानि पहुँचाने का प्रयत्न करता, उसे वे कुल्हाड़ी से दण्डित करते थे। इस प्रकार वे इसे भगवान् का कार्य समझते हुए करते थे।

उसी नगर में शिवकामी अण्डार नामक एक शिव-भक्त रहता था। वह प्रतिदिन नियमित रूप से भगवान् शिव की पूजा किया करता था। वह प्रातः स्नान इत्यादि के उपरान्त मन्दिर में भगवान् को अर्पित करने के लिए पुष्पहार बनाने हेतु पुष्प एकत्रित करने जाता था। यह उसका दैनिक कार्यक्रम था।

महानवमी के दिन जब सभी लोग अत्यन्त आनन्दविभोर थे, शिवकामी अण्डार सदा की भाँति फूलों की टोकरी लिये हुए शीघ्रता से मन्दिर की ओर जा रहा था। उसी समय राजा का पालतू हाथी नदी में स्नान करके वापस लौट रहा था। उसकी पीठ पर महावत बैठा हुआ था तथा तीन और लोग उसके साथ-साथ जा रहे थे। तभी अचानक वह हाथी पागल हो गया और लोगों को मारने के लिए उनके पीछे दौड़ने लगा। लोग भयभीत होकर इधर-उधर भागने लगे। वह शिवकामी अण्डार की ओर बढ़ा, उसे पकड़ लिया, उसके हाथों से फूलों की टोकरी खींच कर भूमि पर गिरा दी और आगे भाग गया। सारे फूल धरा पर बिखर गये। भगवान् को समर्पित किये जाने वाले पुष्पों को हाथी द्वारा गिरा कर रौंद दिये जाने से शिवकामी अण्डार अत्यधिक व्याकुल हो कर हाथी के पीछे भागने लगा; किन्तु वह अत्यन्त वृद्ध था, अतः शीघ्र ही थक कर धरती पर गिर गया। वह 'शिवदा, शिवदा!'(गहन दुःख की अभिव्यक्ति) कहते हुए उच्च स्वर में रुदन करने लगा। संयोगवश एरीपाथा नयनार उसी समय उधर से निकले। उन्होंने शिवकामी अण्डार की दुःख-भरी कातर ध्वनि सुनी और उसका कारण जा कर पूछा, ''कहाँ है वह हाथी?'' शिवकामी अण्डार ने बिलखते हुए जिस ओर संकेत किया, वे उसी ओर तीव्र वेग से दौड़े। शीघ्र ही वे हाथी के निकट पहुँच गये और अपनी शक्तिशाली कुल्हाड़ी हाथी की ओर फेंकी। एक ही वार से उन्होंने हाथी को मार गिराया और फिर महावत एवं अन्य तीनों साथ वाले लोगों को भी मृत्यु के घाट उतार दिया।

हाथी की मृत्यु का समाचार राजा के पास पहुँचा और वह तत्काल सैनिकों सहित अपने अश्व पर बैठ घटना-स्थल पर पहुँचे। वह समझ न सके कि हाथी को किसने मारा, क्योंकि वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि शिवयोगी एरीपाथार द्वारा यह दुष्कृत्य सम्भव हो सकता है। वह उच्च स्वर में बोले, ''मेरे हाथी का वध किसने किया है?'' जैसे ही किसी ने एरीपाथार की ओर संकेत किया, राजा का क्रोध उसी क्षण लुप्त हो गया क्योंकि वे जानते थे कि यदि शिवयोगी ने ऐसा किया है तो निश्चित रूप से इसका कोई ठोस कारण होगा। उन्होंने सोचा कि सम्भवतया आत्म-रक्षा हेतु उन्होंने ऐसा किया होगा और वे अत्यन्त प्रसन्न हुए कि हाथी ने शिवयोगी को कोई हानि नहीं पहुँचायी। उन्होंने एरीपाथार से कहा, ''हे स्वामी, मुझे ज्ञात नहीं था कि आपने हाथी का वध किया है। अवश्य ही हाथी और इसके महावत ने आपकी कुछ हानि की होगी, अतः आपने उनको दण्डित करके उचित ही किया।'' एरीपाथार ने राजा को सम्पूर्ण घटना सुना दी और कहा, ''क्योंकि हाथी और महावत शिव-अपराध के दोषी थे, अतः मैंने उनका वध कर दिया।'' जब राजा ने 'शिव-अपराध' शब्द सुना तो वे अत्यधिक मानसिक कष्ट से ग्रस्त हो गये। वे एरीपाथार के चरणों में गिर पड़े और अति व्याकुलता सहित बोले, ''उन्होंने जो-कुछ किया है, उसके लिए आपके द्वारा दिया गया यह दण्ड पर्याप्त नहीं है। मैं ऐसे दुष्ट हाथी और महावत को रखने का घोर अपराधी हूँ। मैं तो आपकी इस पावन कुल्हाड़ी द्वारा दण्ड पाने के भी योग्य नहीं रहा। यह रही मेरी तलवार, कृपा करके इसके द्वारा मेरा शिर धड़ से अलग कर दें।''

राजा के ये शब्द सुन कर एरीपाथार स्तब्ध रह गये। वे स्वयं शोक से भर गये, मैंने राजा को कितनी पीड़ा पहुँचायी! उन्होंने सोचा कि राजा को कष्ट देने के वे ही कारण बने हैं, इसलिए उन्होंने अपना गला काटना आरम्भ कर दिया। राजा अत्यधिक घबरा गये कि अब वह एक और जघन्य अपराध का कारण बनने लगे हैं। तत्क्षण ही उन्होंने तलवार को पकड़ लिया और एरीपाथार को ऐसा करने से रोकने में सफल हो गये।

भगवान् की लीला सम्पूर्ण हो गयी थी, अतः उसी समय आकाशवाणी सुनायी दी, ''ओ दिव्यात्माओ! यह पशुपतीश्वर की लीला है। यह उनकी इच्छा है कि उनके सच्चे एवं गहन भक्तों की भगवान् के प्रति एकनिष्ठ सेवा-भक्ति को समस्त संसार पहचाने।'' उसी क्षण वह हाथी और महावत ऐसे उठ कर खड़े हो गये मानो निद्रा से उठे हों। शिवकामी अण्डार की टोकरी फूलों से भरी हुई वहीं पड़ी थी। सभी आश्चर्यचकित हो हर्ष से आनन्दविभोर हो पशुपतीश्वर भगवान् की स्तुति करने लगे। एरीपाथार ने राजा के चरणों में उनकी तलवार को रखते हुए उन्हें प्रणाम किया। राजा भी एरीपाथार के चरणों में गिर पड़े। दोनों ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक परस्पर आलिंगन किया। एरीपाथार ने इच्छा व्यक्त की कि राजा पुनः अपने प्रिय हाथी पर बैठ जायें। राजा ने ऐसा ही किया। एरीपाथार अपने घर लौट गये। शिवकामी अण्डार फूल ले कर मन्दिर चले गये।

एरीपाथार शिव-भक्तों की सेवा में संलग्न रहे। अन्ततः वे नश्वर देह को त्याग कर शिवधाम चले गये।

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

आपका शान्ति-दूत :

मेरे प्रिय बच्चो, आप दिव्यता में जियो!

(परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज)

(पूर्व-अंक से आगे)

लक्ष्य की स्पष्टता

विवेक को स्थायी पोषण देने के लिए एकान्त में कुछ समय के लिए नित्य आध्यात्मिक स्वाध्याय द्वारा स्वयं को परमात्मा के साथ संयुक्त करना आवश्यक है। एकान्त में मौन हो कर बैठ जायें और अपने शरीर को सीधा और स्थिर किन्तु ढीला रखते हुए आरामदायक ढंग से बैठें। यदि आपकी आयु साठ वर्ष की है तो विचार करें, ''बासठ वर्ष पहले मैं किस स्थिति में था?'' अपने इस शरीर में जन्म होने से पहले की उस अवस्था, जब ये नाम और रूप अस्तित्व में नहीं आये थे, के सम्बन्ध में मनन करें। यदि आप बीस वर्ष के हैं तो विचार करें कि बाईस वर्ष पूर्व आप क्या, कैसे और कहाँ थे? आपके इस शरीर के जन्म से पहले भी आपका अस्तित्व था। आप मुझे बतायें कि आज से सौ वर्ष बाद आप कहाँ होंगे? क्या आप सोचते हैं कि आपमें से कोई एक भी यहाँ, इस धरती पर होगा? आपके ऊपर घास उगा हुआ होगा; किन्तु वह वास्तव में आपके ऊपर नहीं, अपितु आपके इस शरीर पर होगा।

आपके अस्तित्व में आने से पहले और इस शरीर के अन्त होने के पश्चात् आपकी क्या स्थिति थी? क्या अभी भी आपकी वही स्थिति नहीं है? यह देह तो केवल एक अस्थायी घटना है, किन्तु आप वस्तुतः सत् चित् आनन्द स्वरूप हैं। अपने उस दैनिक मौन-ध्यान के समय में अपने अस्तित्व की इस आधारभूत सत्यता को अनुभव करें। इस तथ्य को सुदृढ़ करें, ''मेरा कोई नाम नहीं है, मेरा कोई रूप नहीं है, मेरा जन्म नहीं है, और मेरी मृत्यु भी नहीं है। मैं समस्त ज्योतियों की उस शाश्वत परम ज्योति की एक उज्ज्वल किरण हूँ। मैं 'वह' ही हूँ।'' जागरूक रहें और इस सत्य के प्रकाश में जियें! प्रतिदिन इस मौन-ध्यान को पोषित करते रहें, और इस प्रकार आपके बोध में यह प्रकाशित हो जायेगा, और आपका अन्तरमन शक्ति के प्रवाह से आप्लावित होने लगेगा। बाह्य जगत् का अन्य सब-कुछ भूल जायें। केवल अपने वास्तविक स्वरूप के आन्तरिक प्रकाश की जागरूकता बनाये रखें। अपने व्यक्तित्व के उस उद्भासित केन्द्र में निवास करें जो असीम धन्यता का भण्डार है। समस्त शुभता एवं सम्पूर्ण सौन्दर्य आपके उस आन्तरिक केन्द्र में ही निवास करते हैं। उस केन्द्र में अनन्त ज्ञान, शक्ति और भलाई की क्षमता है। वहाँ असीम शुभता और धन्यता है, क्योंकि उस केन्द्र में आप अविच्छिन्न रूप से परम चैतन्य सत्ता के साथ निरन्तर जुड़े हुए हैं।

दिव्यता, परिपूर्णता, पवित्रता, ज्ञान—इन

सबका अक्षय भण्डार आपके लिए उपलब्ध है। आपकी सीधी पहुँच इन तक है। इससे भी अधिक यह है कि ये सब आपके अपने हैं, क्योंकि आपका इन सब पर जन्म-सिद्ध अधिकार है। इसीलिए यीशु ने कहा था, ''पिता के खजाने पर पुत्र का भी अधिकार होता है। आप माँगें तो वह मिल जायेगा। खोजें और उसे आप पा लेंगे। खटखटायें और वह आपके लिए खोल दिया जायेगा।'' यह खटखटाना, यह खोजना और यह माँगना इसी प्रकार से किया जाता है—प्रतिदिन निरन्तर मौन-साधना में जाना और अपने अन्तरतम केन्द्र में परम सत्ता के साथ जुड़े रहना। वहाँ पर आप वही हैं जो कि वास्तव में आपका नाम रहित, रूप रहित, शाश्वत स्वाभाविक स्वरूप है।

मेरे प्रिय बच्चो, आप दिव्यता में जियो! क्योंकि आपका शरीर देश-काल में जीता है, आपका मन समय में सोचता है किन्तु आप शाश्वतता में जीते हैं। आप परमात्मा में रहते हैं—यहाँ, अभी और सदैव। यह प्रबुद्ध ज्ञान आपको उन्नत करके इस जागरूकता तक ले जाता है; अतः अत्यन्त ध्यानपूर्वक अपनी बुद्धि को पोषित एवं आलोकित करें। ज्ञान के स्रोतों और सद्ग्रन्थों के भण्डारों से ज्ञान अर्जित करें। प्रतिदिन एकान्त में कुछ समय के लिए बैठें और जीवन के सम्बन्ध में चिन्तन करें। बड़ों के पास जायें, उनसे उपदेश प्राप्त करें, उनसे निर्देश देने के लिए अनुरोध करें। यदि आप ऐसा करना प्रारम्भ कर देते हैं तो धीरे-धीरे आप अधिक-से-अधिक प्रकाश की ओर उन्नत होने लगेंगे।

अब मैं आपको एक सफल जीवन जीने के लिए कुछ आधारभूत सिद्धान्त बताना चाहता हूँ। यदि आप ज्ञान में उन्नत होना चाहते हैं और वास्तविक प्रसन्नता एवं परिपूर्णता की ओर अग्रसर होना चाहते हैं तो आपको निश्चित रूप से इन सिद्धान्तों अथवा नियमों को अपनाना चाहिए। सर्वप्रथम, अपने समक्ष अपना एक स्पष्ट लक्ष्य रखें। इस लक्ष्य को हर समय अपनी दृष्टि के सामने रखें। द्वितीय, सदैव किन्हीं सिद्धान्तों द्वारा निर्देशित रहें। तृतीय, जिस समय आप जहाँ हैं और जैसी भी परिस्थिति में हैं, उस समय आपका जो भी कर्तव्य है, उसे भली प्रकार से निभायें। यदि आप पुत्र हैं तो पुत्र के जो कर्तव्य हैं, उनको भलीभाँति सम्पन्न करें; यदि आप पिता हैं, तो पिता का कर्तव्य ठीक से पालन करें; यदि आप पत्नी हैं, तो एक धर्मपत्नी एवं माता के कर्तव्य पूर्ण रूप से निभायें और यदि आपको किसी कार्यक्षेत्र में नौकरी मिली हुई है, तो अपना कार्य ईमानदारी से और निष्ठापूर्वक करें। आप जानते हैं कि प्रायः प्रत्येक व्यक्ति को एक ही समय में कई प्रकार की भूमिकाएँ भी निभानी होती हैं। उदाहरणार्थ आप अपने पुत्र के पिता होने के साथ-साथ अपने माता-पिता के पुत्र भी हैं और हो सकता है कि पड़ोस में रहने वाले के आप पड़ोसी भी हों तथा इसके अतिरिक्त आपके अन्य अनेक सम्बन्ध एवं उत्तरदायित्व भी हों। ऐसी स्थिति में भी आप प्रत्येक क्षेत्र में आपका जो भी कर्तव्य है, उसे निश्चित रूप से भलीभाँति पूर्ण करें।

यदि आपने इस प्रकार अपने कर्तव्यों को

उचित ढंग से पूर्ण कर दिया है, तो आपके समक्ष आवश्यक रूप से एक आदर्श की अवधारणा स्पष्ट होनी चाहिए। यदि आप उस आदर्श को सामने रखते हुए उसके प्रकाश में अपने कर्तव्यों का वहन करते हैं तो आपके जीवन में से स्वतः ही दूसरों को लाभ, प्रसन्नता और सुख की प्राप्ति होगी। यदि आप अपने जीवन के कुछ ऐसे सिद्धान्त रख लेते हैं जो आपके जीवन को और गतिविधियों को निर्देशित करते हों, तब आपका जीवन एक निर्देशित दिशा-विशेष को अपना लेगा, और यह इधर-उधर विभिन्न दिशाओं में भ्रान्तिपूर्ण स्थिति में भटकते रहने वाली स्थिति में नहीं रहेगा। यह सिद्धान्त नदी के दोनों तटों के मध्य प्रवाहित होने वाले जल के प्रवाह की भाँति होंगे जो पानी को सही दिशा में बहने देंगे। यदि आप अपने जीवन में ऐसे सिद्धान्तों का सुदृढ़ता से पालन करते हैं तो आपकी पचास प्रतिशत समस्याओं का समाधान हो जायेगा। आपको किसी प्रकार की चिन्ता, घबराहट और तनाव नहीं रहेगा। आपके मन में कोई दुविधा और अनिश्चितता नहीं होगी और किसी भी परिस्थिति में आप अनिश्चित अवस्था में नहीं पड़ेंगे।

किसी भी प्रकार की परिस्थिति आ जाने पर आपके समक्ष उचित दिशा स्पष्ट होगी, क्योंकि आप जानते होंगे कि अमुक मार्ग आपके सिद्धान्तों के अनुकूल है। जो भी दिशा आपके सिद्धान्तों के अनुरूप नहीं है, उसका आपके जीवन में कोई स्थान नहीं है। अपने जीवन और व्यवहार में सुनिश्चित सिद्धान्त अपना लेने का यह महत्त्व है। इसका परिणाम है—स्पष्टता, और इसका फल है—दुविधा एवं सन्देह का अभाव। अन्यथा आप हर पग पर दुविधाग्रस्त रहेंगे और स्वयं की उलझनों की गाँठों में जकड़ते जायेंगे।

यदि आप अपना एक सुनिश्चित लक्ष्य रखते हैं, तो आपके जीवन को दिशा मिल जाती है और आपका जीवन उस लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की एक सुनिश्चित उद्देश्यपूर्ण पद्धति को अपना लेता है। जहाँ ऐसी उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया होती है, वहाँ शक्ति एवं क्षमता आ जाती है। उद्देश्यहीन मनुष्य सदैव निर्बल होता है। इस संसार में आपको सदा ही आकर्षणों-विकर्षणों का सामना करना पड़ता है और यदि आपका जीवन किसी सुनिश्चित दिशा की ओर सक्षम रूप से अग्रसर नहीं हो रहा है, तो आपको सदा ही उन आकर्षणों-विकर्षणों से भय बना ही रहेगा। किन्तु जब आप उद्देश्य सहित एक विशेष दिशा की ओर बढ़ रहे होते हैं, तब यह सब बाह्य प्रभाव आपको कोई हानि नहीं पहुँचा सकते। तब आपका जीवन इतना सशक्त-सक्षम होगा कि इन सभी बाह्य शक्तियों के होने पर भी आप अपनी उसी दिशा में आगे बढ़ते रहेंगे। एक सुनिश्चित लक्ष्य रखने की यह आवश्यकता एवं महत्त्व है। कर्तव्य की भावना एक ऐसा शस्त्र है जो सभी प्रलोभनों से आपकी रक्षा करता है; क्योंकि यदि आप प्रत्येक पग पर कर्तव्य की पुकार का उत्तर देने केलिए स्वयं को सुशिक्षित कर लेते हैं, तो आप प्रत्येक परिस्थिति के सदैव मालिक बन कर ही रहते हैं।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

आध्यात्मिकता का सत्य-स्वरूप :

प्राणायाम, सामंजस्यपूर्ण श्वसन-कला

(परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज)

(पूर्व-अंक से आगे)

मन की एकाग्रता के साथ-साथ श्वास स्वत: ही अवरुद्ध होता है। इसका तात्पर्य है कि शान्त मन तथा कुम्भक का पारस्परिक सामंजस्य है। अन्तत:, इसका निष्कर्ष है कि हम श्वास इसीलिए ले रहे हैं क्योंकि हम अशान्त हैं। सम्भ्रान्त मन के कारण हम श्वास ले रहे हैं; अन्यथा, हम श्वास नहीं लेंगे। पतंजलि एक सूत्र में विशेषतया उल्लेख करते हैं कि योग में श्वास एक महान् बाधा है। हमें आश्चर्य होगा क्योंकि हम श्वास के द्वारा जीवित रहते हैं, तथा पतंजलि इसे बाधा कहते हैं। यह एक बाधा है क्योंकि यह एक असामान्य परिस्थिति है जो हमारे अन्दर उत्पन्न हुई है, क्योंकि हमारा सम्पूर्ण व्यक्तित्व अप्राकृतिक है। हम लोग प्राकृतिक नहीं हैं। वर्तमान में, जितना अधिक हम अपनी शारीरिक, सामाजिक, जैविक दशा समझेंगे, उतना अधिक हम आश्चर्यचकित होंगे, तथा सत्य के क्षेत्र में अपनी लघुता तथा नम्रता देख कर विस्मित होंगे।

हमारे शरीर में, सम्पूर्ण व्यक्तित्व में एक प्रकार की उत्तेजना निहित है। इस उत्तेजना को शान्त करना है, दबाना नहीं है। प्राणायाम का प्रयोजन श्वास को दबाना नहीं है। योग का अभिप्राय दबाना अथवा रोकना नहीं है—इच्छाओं को, श्वास को, विचारों को रोकने का नाम नहीं है। रोकना तथा दबाना शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि उनके सांकेतिक अर्थों का योग से कोई सम्बन्ध नहीं है। योग उदात्तीकरण है जो पुन: साधारण मनुष्यों के लिए समझना कठिन है। प्राणायाम प्रक्रिया भी उदात्तीकरण के रूप में होनी चाहिए, श्वास-प्रक्रिया को दबाने के रूप में नहीं। हमें अपना गला अथवा नाक पकड़ने के लिए नहीं कहा जाता जिससे कि हमारा श्वास अवरुद्ध हो जाए।

उदात्तीकरण का तात्पर्य है स्वस्थ परिवर्तन। यह वर्धन है, अपघटन नहीं, नाश अथवा किसी प्रकार का पतन नहीं। एक युवक बचपन अथवा किशोरावस्था से आगे बढ़ता है, परन्तु एक युवक, युवक बन कर कुछ नहीं खोता। युवक यह नहीं सोचता, ''मैंने अपना बचपन खो दिया है, इसीलिए मैं परास्त हुआ हूँ।'' युवक, बालक अथवा किशोर न होने के कारण पराजित नहीं हुआ है, क्योंकि वह निम्नतर स्थिति किशोर की उच्चतर स्थिति में समाहित हो चुकी है। इसीलिए, वर्धन निम्न स्थितियों के उदात्तीकरण का एक अच्छा उदाहरण है, तथा प्राणायाम एवं योग की अवस्थाएँ, जो बाद में आती हैं—उदात्तीकरण की प्रक्रिया हैं। वस्तुत:, योग की प्रत्येक अवस्था—केवल प्राणायाम, प्रत्याहार इत्यादि ही नहीं—उदात्तीकरण में से एक है। यम, नियम इत्यादि से आरम्भ हो कर यह उदात्तीकरण उबलना, पवित्र होना तथा हमें कच्ची धातु से स्वर्ण बनाने की प्रक्रिया है—जिससे हम किसी वस्तु से वंचित नहीं होते, अपितु कुछ अद्भुत की प्राप्ति होती है। उदात्तीकरण की कला में निपुण होने के लक्षण—उत्कर्ष

का ज्ञान, आत्मा की प्रफुल्लता, स्वास्थ्य तथा हलकापन आदि होंगे। हमें धीरे चलने के स्थान पर दौड़ने का मन करेगा। हल्कापन तथा प्रफुल्लता स्वास्थ्य के लक्षण हैं जो उस स्वतन्त्रता की तरह हैं जो हम अपनी सम्पूर्ण प्रणाली में अनुभव करते हैं, तथा शरीर के किसी भाग, प्राण अथवा मन में घुटन के रूप में ये नहीं हैं।

अत:, प्राणायाम इत्यादि द्वारा निर्देशों का प्रयोजन हमें स्वस्थ बनाना है, जहाँ हमारी प्रणाली में से समस्त विषैले पदार्थों को क्रमश: दूर किया जाता है। जो भी विषाक्त है, वह हमारे मूलभूत स्वभाव का भाग नहीं है। जो हम आवश्यक रूप से अपने सार रूप में हैं, वही वास्तविक स्वास्थ्य का निर्धारक तथ्य है, तथा जो हमारे वास्तविक स्वभाव से बाहर है, उसे हम विषाक्त कहते हैं। जो भी पदार्थ हमारे अन्दर बाह्य रूप में प्रविष्ट हुआ है, जो हमारे स्वभाव के विपरीत है, वह विकर्षण का कारण होगा।

पिछले उपदेश में मैंने यह इंगित किया था कि यह बाह्य पदार्थ विविधता का तत्त्व है जो एकता के सिद्धान्त में बाधा डालता है। वस्तुत:, हमारे अन्दर कुछ अभिन्न है जिसका अनन्तता में विस्तार हम योग द्वारा ढूँढ़ रहे हैं, परन्तु विविधता का तथ्य इसके साथ निरन्तर हस्तक्षेप करता है तथा हमें ज्ञानेन्द्रियों द्वारा बाहर की ओर आकृष्ट करता है जिससे हम कुछ वस्तुओं के प्रति आकृष्ट होते हैं, तथा कुछ वस्तुओं से पीछे हटते हैं। ये तथ्य विकर्षण करते हैं—श्वास लेने तथा विचार करने में, तथा इनका सावधानीपूर्वक निराकरण करना है।

(समाप्त)

(भाषान्तर : मेधा सचदेव)

देहाध्यास दु:ख का कारण है । आत्मज्ञान प्राप्त होने पर कुछ भी दु:ख नहीं रहता, भले ही शरीर में कोई रोग हो । वह देह-भाव से ऊपर उठ गया है । केवल हठयोगी, जिसने अपनी काया-सिद्धि के द्वारा शरीर के कण-कण को अपने अधीन कर लिया होगा, शरीर को हर प्रकार की बीमारी से बचा सकता है । शरीर से ऊपर उठना चाहिए और दु:ख-रोग-विहीन आत्म-स्वरूप बनना चाहिए। तब सारे दु:ख दूर होंगे । सुषुप्ति यदि है, तो भारी बीमारी के होते हुए भी शरीर में कोई पीड़ा नहीं रहती है । क्लोरोफार्म दे कर बेहोश कर दिया जाये, तो पैर काट दें, तब भी पता नहीं चलता । दु:ख का कारण है शरीर और मन का संयोग । यदि ध्यानयोग के द्वारा मन को शरीर से हटा कर आनन्दमय आत्मा में लीन कर दिया जाये, तो लाख बीमारी के होने पर भी कोई दु:ख नहीं रहेगा । यह ज्ञानयोग-साधना है । प्रारब्ध को तो भोगना ही पड़ता है । इसलिए शरीर बीमार पड़ता है; पर जीवन्मुक्त पर किसी दु:ख का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । बाहर से देखने वालों को लगता है कि योगी भी बीमारी से पीड़ित है, पर यह भूल है । श्री रामकृष्ण परमहंस गले के कैंसर से पीड़ित थे, बुद्ध को पुरानी पेचिश थी, श्री शंकराचार्य को बवासीर थी; परन्तु उन लोगों को कोई दु:ख नहीं था । डाक्टरों ने श्री रामकृष्ण परमहंस से पूछा—''क्यों आप यों दु:ख भोगते हैं? आपरेशन क्यों नहीं करवा लेते?'' उन्होंने उत्तर दिया—''मैंने अपना मन काली माँ को सौंप दिया है । मैं शरीर के बारे में कैसे ध्यान दूँ? इस मांस-पिण्ड की ओर मन को वापस कैसे लाऊँ? मुझे तो सदा आनन्द है ।''

—स्वामी शिवानन्द

मानव से ईश-मानव :

श्री स्वामी शिवानन्द जी का व्यक्तित्व

(श्री एन. अनन्तनारायणन्)

(पूर्व-अंक से आगे)

स्वामी शिवानन्द जी का वास्तविक स्वरूप अबोधगम्य था। अपने मन-बुद्धि को उच्च आकाश में और पग धरती पर लिये हुए, वे अद्भुत व्यक्तित्व से सम्पन्न थे। वे जगत् को भगवान् का प्रत्यक्ष विराट् रूप होने में विश्वास करते थे और प्रकृति में एवं प्रत्येक वस्तु में उनका प्रकटीकृत रूप देखते थे। उन्होंने जगत् को भगवान् की महिमा, उनकी भव्यता एवं सौन्दर्य से आरोपित देखा। यद्यपि उनकी दृष्टि में यह संसार एक स्वप्न मात्र था, तथापि वे इस स्वप्न-जगत् की समस्त गतिविधियों में पूर्ण रुचि लेते प्रतीत होते थे।

गुरुदेव मानव-मन की पकड़ से सदा ही परे निकल जाते थे। कभी-कभी भक्तों को लगता था कि वे उनके सबसे निकटतम मित्र हैं। कभी उन्हीं भक्तों को आशंका होने लगती कि उनके गुरु उनकी पहुँच से बहुत दूर हैं। ''वे हमें बिलकुल अपने जैसे, अपने ही लगते हैं; किन्तु बस थोड़े से अपने से दूर प्रतीत होते हैं। परन्तु जब हम उस थोड़े से दूर तक पहुँचते हैं, तो पुनः पाते हैं कि वे अभी भी थोड़े से परे ही हैं'', यह बात बरमा के एक पत्रकार, श्री तुन्हला ने २६ सितम्बर १९५५ को आश्रम में दिये गये अपने वक्तव्य में कही थी।

स्वामी जी के एक युवा शिष्य ओंकारानन्द जी ने गुरुदेव का 'एक अवैयक्तिक व्यक्तित्व', 'एक अबोधगम्य व्यक्तित्व' कहते हुए चरित्र-चित्रित किया। स्वामी जी के व्यक्तित्व में मानवत्व और ईश्वरत्व इस प्रकार अविभाजनीय रूप में परस्पर गुँथे हुए थे। वास्तव में वे एक दिव्यत्व-सम्पन्न मानव, ईश-मानव थे।

यही कारण था कि सहस्रों की संख्या में लोग उनके श्रद्धालु थे। वे दूर-दूर से उनके दर्शन मात्र के लिए आते थे। पृथ्वी के सुदूर कोनों से अपरिचित विदेशी लोग

*बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के इस छात्र की भाँति अनेक लोगों को यह अनुभव हुआ कि स्वामी जी के चित्र में उसी प्रकार कुछ विलक्षण अवश्य है, जैसा कि उनकी रचनाओं में भी कुछ ऐसा असाधारण है जो अन्य किसी आध्यात्मिक साहित्य में देखने में नहीं आता। सम्भव है कि स्वामी जी की दिव्यता ने विशेष रूप से इन दो माध्यमों से अभिव्यक्त होना चयन किया हो। हो सकता है कि यह अविश्वसनीय प्रतीत हो कि आश्रम में यह व्यक्त करने वाले पत्र आया करते थे कि कैसे एक व्यक्ति के जीवन में गुरुदेव का चित्र पहुँचा, एक अन्य में कैसे वह नृत्य कर रहा था और ऐसे ही अनेकों अन्य पत्र भी आते ही रहते थे। स्वयं गुरुदेव के मुख से भी लोगों ने आध्यात्मिक साधकों से कहते हुए सुना है, 'मेरा चित्र रखें और उस पर ध्यान केन्द्रित करें, आपको अपने प्रश्नों के उत्तर मिल जायेंगे', अथवा 'मेरा चित्र रखिए, यह आपसे बात करेगा।' और गुरुदेव अपनी पुस्तकों एवं पत्रिका में प्रकाशित किये जाने वाले चित्रों के सम्बन्ध में भी विशेष ध्यान रखते थे और विशेष रूप से मुखपृष्ठ के चित्र के विषय में, जो पाठकों की दृष्टि को सीधे आकर्षित करता था, वे पूर्ण ध्यान देते थे। यह दम्भ अथवा आत्म-श्लाघा नहीं थी। गुरुदेव इनसे अति परे, कहीं ऊपर थे। उनसे थोड़े परिचित भी यह भलीभाँति जानते हैं। सम्भवतया गुरुदेव का अपने इस चित्र जैसे निर्जीव माध्यम से भी लोगों की यथासम्भव सेवा करने की तीव्र इच्छा का भाव रहा होगा।

उनकी उपस्थिति में छोटे बालक के समान बिलख-बिलख कर रोते हुए अश्रु बहाते थे। युवक और युवतियाँ अपने निकट सम्बन्धियों को त्याग कर उनके चरणों में सर्वस्व समर्पित कर देते थे।

जिन्हें गुरुदेव के साक्षात् दर्शन करने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ था, वे उनसे प्राप्त होने वाले पत्र अथवा पुस्तक, जप-माला अथवा चित्र को अनमोल निधि के समान अपने पास सुरक्षित रखते थे। उनका चित्र बहुतों के लिए प्रेरणा-स्रोत था। बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के एक विद्यार्थी ने गुरुदेव के चित्र के सम्बन्ध में कहा, ''कुछ क्षण के लिए मैंने बैठ कर उनके चित्र को एकटक देखा। चित्र के चतुर्दिक् परिव्याप्त पवित्रता, शान्ति और एक विलक्षण आनन्दानुभूति ने आध्यात्मिक जीवन के वास्तविक अर्थ मुझे किसी भी अन्य दर्शन सम्बन्धी पुस्तक से कहीं अधिक भली प्रकार से स्पष्ट कर दिये। चित्र से विकीर्णित होते हुए सूक्ष्म आध्यात्मिक भाव निश्चित रूप से उनकी शक्ति को अभिव्यक्त कर रहे थे।* मुझे यह जान लेने में अधिक समय नहीं लगा कि एक विद्वान् में और एक परिपूर्ण सन्त में क्या अन्तर है।''

हाँ, स्वामी शिवानन्द जी एक पूर्ण सन्त थे, सन्तों में सन्त—आध्यात्मिक आकाश-गंगा में एक मोहक सितारा थे। अन्य सन्त-वर्ग के वे ऐसे चहेते थे कि सभी उन्हें जी-जान से चाहते थे। उनमें से भारी संख्या में सन्त आश्रम में उनके दर्शनार्थ आये। वसिष्ठ गुहा के श्रद्धेय श्री स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी और नैमिषारण्य के श्रद्धेय श्री स्वामी नारदानन्द जी जैसे महान् सन्त, नेत्रों में से अपने वयोवृद्ध कपोलों पर प्रेमपूर्ण अश्रुपात करते हुए गुरुदेव के चरणों में आ कर बैठे थे। साकोरी की गोदावरी माँ जैसी उदात्त आत्मा साध्वी ने उनके चरणों का पारम्परिक ढंग से विधिवत् पाद-पूजन किया। द्वारका पीठ के शंकराचार्य जैसे धर्माध्यक्ष ने असीम प्रेमपूर्वक स्वामी जी का आलिंगन किया। आनन्दमयी माँ एवं पार्वतीकर महाराज सरीखे पूजनीय सन्तों ने स्वामी जी के सत्संग में दिव्य प्रेम में भावविभोर हो कर भगवद्-भजन किया। कान्हनगढ़ के स्वामी रामदास, पूना के साधु वासवानी और कांचीपुरम् की कामकोटि पीठ के शंकराचार्य जैसे कुछेक महान् सन्तों के साथ स्वामी जी का प्रेमपूर्ण पत्र-व्यवहार चलता था। एक पत्र में साधु वासवानी जी ने लिखा : ''सम्भवतया आपके जानने से कहीं अधिक मैं प्रायः आपके सम्बन्ध में सोचा करता हूँ...और जैसे मैं आपके विषय में सोचता हूँ, मेरे मन में आपके चतुर्दिक् देवताओं का विचार आता है...मैं सोचता हूँ कि मैं अपने सामने आपका चित्र देख रहा हूँ और मैं अपने हृदय में अतीव प्रेम लिये हुए आपके समक्ष नत-मस्तक हो जाता हूँ, और एक सन्त की कविता की यह पंक्तियाँ मेरे मानस-पटल में उभर आती हैं :

'प्रियतम आप आओ
मेरे मन-मन्दिर में!
और मुझे छू लेने दो आपके चरण
शुद्ध, मृदुल प्रेम से!
.....।' ''

और गुरुदेव ने भी इन सभी सन्तों का पूजन किया। उन्होंने सभी को भरपूर प्रेम दिया और जितनी भी कर सकते थे, भरपूर सेवा की। जैसे एक शिशु अपनी माँ को आलिंगन करने के लिए भाग कर जाता है, बिलकुल उसी तरह गुरुदेव **नारायण, नारायण, नारायण**—भगवन्नाम का उच्चारण करते हुए सभी आने वाले सन्तों का स्वागत-सम्मान और आलिंगन करने के लिए उनकी ओर दौड़ कर जाते थे। उनको देखते, वार्तालाप करते और सेवा करते समय स्वामी जी हर्षातिरेक से आनन्दमग्न हो जाते थे।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

शिवानन्द ज्ञानकोष :

ईश्वर

(परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज)

(पूर्व-अंक से आगे)

ईश्वर है कहाँ ?

ईश्वर है कहाँ ? कोई भी तो ऐसा स्थान नहीं, जहाँ वह नहीं है। जैसे पुष्पमाला के सभी पुष्पों में धागा रहता, वैसे ही ईश्वर सभी प्रणियों में रमता है। जैसे तिलों में तेल, दूध में मक्खन, मस्तिष्क में बुद्धि, शरीर में प्राण, गर्भाशय में भ्रूण, मेघों के पीछे सूर्य, लकड़ी में अग्नि, वायुमण्डल में वाष्प, जल में नमक, ग्रामोफोन रेकार्ड में ध्वनि, खान में सोना, रक्त में सूक्ष्म रक्तकण निहित है, वैसे ही ईश्वर सब प्राणियों में विद्यमान है। सभी प्राणियों में वह चेतना और प्राण के रूप में विद्यमान है। सिंह की गर्जना में, पक्षी की चहचहाहट में, शिशु के रुदन में वह ही तो है। उसी की अनुभूति सर्वत्र करो।

तितली के पंखों में, वर्णमाला के अक्षरों में, रोगी की खाँसी में, नदी की कलकल में, घण्टे की ध्वनि में उसी के दर्शन करो। विश्व के सब पदार्थों में उसी के अद्‌भुत दर्शन करो।

नासिका की हर साँस, हृदय की प्रति धड़कन, शरीर की प्रत्येक नाड़ी की गति, मन का हर विचार आपको बता रहा है कि ईश्वर तुम्हारे पास ही है।

प्रत्येक पुष्प की सुगन्ध, प्रत्येक फल का आकर्षण, मन्द समीर का झोंका, नदी का प्रवाह ईश्वर के अस्तित्व और उसकी करुणा को दर्शाता है। विशाल, अपार, अथाह समुद्र की शक्तिशाली लहरें, उन्नत हिमालय तथा इसके हिम-शिखर, अनन्त आकाश के देदीप्यमान् सूर्य तथा सितारे, शाखाओं से युक्त गगनचुम्बी वृक्ष, पर्वतों तथा घाटियों के शीतल झरने—ये सभी ईश्वर के सर्वशक्तिमान् होने के गुण गा रहे हैं।

संगीतज्ञों के मधुर स्वर, प्रभावशाली वक्ताओं के भाषण, विख्यात कवियों की कविताएँ, सुयोग्य वैज्ञानिकों के आविष्कार, दक्ष शल्य-चिकित्सकों की शल्य-क्रियाएँ, पावन सन्तों की वाणियाँ, भगवद्‌गीता के विचार, उपनिषदों के ईश्वरीय वचन—ये सब ईश्वर तथा ईश्वरीय ज्ञान का पूर्ण परिचय ही तो दे रहे हैं।

सर्वत्र उसी का रूप है। सौभाग्य, दुर्भाग्य वही है। सभी रूपों में उसी का स्वागत करो और आनन्द में स्थित रहो।

विश्व-भर में ईश्वर व्याप रहा है। भिखारी के रूप में वही तो फिर रहा है। रोगी के रूप में दु:ख से वही कराह रहा है। जंगल में चीथड़े पहने वही तो मारा-मारा फिर रहा है। नेत्र खोलो, और उसी को इन सबमें पहचानो। सबकी सेवा करो। सबसे प्रेम करो।

प्रत्येक रूप, विचार, भावना, गति में सर्वत्र उसी की अनुभूति करो।

इन्द्रियगम्य ईश्वर का रूप प्रकृति कहलाता है। बुद्धिगम्य रूप मन है। तत्त्व-दृष्टि से आत्म-दर्शन होता है। तुम्हारे हृदय में ईश्वर का ही तो वास है, वही अन्तर्यामी, तुम्हारा संरक्षक तथा शासक है। वह तुममें तथा तुम उसमें हो। वह तुम्हारे अति निकट है। वह दूर नहीं। तुमसे भी तुम्हारे अधिक निकट है। तुम सोचते थे कि वह कैलास, रामेश्वरम्, मक्का, येरुशलम, आकाश या स्वर्ग में रहता है। तुम्हारे ऐसे विचार तो अयथार्थ ही थे। तुम्हारा शरीर ही उसका चल-मन्दिर है। तुम्हारा हृदय ही उसका पवित्र सिंहासन है। नेत्र बन्द करिए, ऐन्द्रिक विषयों से इन्द्रियों को हटाइए, शुद्ध प्रेम, निष्काम भक्ति तथा एकाग्र मन से उसे अपने हृदय में ही खोजिए। वहाँ

वह तुम्हें अवश्य मिल जायेगा। हाथ फैला कर तुम्हारा आलिंगन करने के लिए आतुर है। और यदि तुम उसे वहाँ नहीं पा सकते, तो फिर कहीं भी सम्भव नहीं।

ईश्वरानुभूति कैसे हो ?

यह तो माँग और पूर्ति का सिद्धान्त है। यदि आपको उसके दर्शनों की तीव्र पिपासा है, तो वह क्षणमात्र में आपके सामने प्रकट हो जायेंगे।

ईश्वर-प्राप्ति के लिए न तो आपको किसी कला, न ही विज्ञान की आवश्यकता है, न ही विद्या, न ही पाण्डित्य की। आवश्यकता है तो केवल श्रद्धा, शुद्धता तथा भक्ति की।

जितने भी सांसारिक लगाव आपको पत्नी, पुत्र, धन, सम्पत्ति, सम्बन्धियों तथा मित्रों से हैं, सबको मिला कर सारा प्यार प्रभु को अर्पण करें तो एक ही क्षण में प्रभु-दर्शन हो जायेंगे। माया और ईश्वर दोनों की एक-साथ प्राप्ति असम्भव है। आध्यात्मिक आनन्द तथा वैषयिक सुखों की प्राप्ति एक-साथ नहीं हो सकती, जैसे प्रकाश या अन्धकार एक-साथ नहीं रह सकते।

ईश्वर को पूर्ण हृदय समर्पित करो। उसके समक्ष अपने-आपको मिटा दो। तभी वे सर्व-समर्थ तुम्हारी रक्षा करेंगे और पथ-प्रदर्शन करेंगे। केवल तभी पूर्ण प्राप्ति हो पायेगी।

अपना स्वार्थ, अपनी कामनाएँ तथा सभी वासनाओं का त्याग करिए। तुम्हें परमानन्द की प्राप्ति होगी।

अहंकार का नाश करिए, तभी आपका हृदय प्रभु-प्रेम से ओत-प्रोत हो जायेगा। अहमता को नष्ट कर दो, दिव्य जीवन स्वत: प्राप्त होगा, ईश्वर-साक्षात्कार होने में देर नहीं लगेगी।

२४ गुरु

जिज्ञासु साधकों के पथप्रदर्शनार्थ सद्गुरु के स्वरूप में भगवान् स्वयं पधारते हैं। ईश्वर-कृपा ही गुरु के रूप में प्रकट होती है, यही कारण है सद्गुरु-दर्शन को भगवद्-दर्शन की संज्ञा दी जाती है। गुरु भगवत्-स्वरूप होता है। और भक्ति की प्रेरणा देता है, उसकी उपस्थिति सबको पवित्र करती है।

गुरु-भगवान् और मानव के बीच की कड़ी है। उसने 'इदं' से 'तत्' तक प्रोन्नत हो कर दोनों लोकों में अप्रतिबद्ध प्रवेश का अधिकार प्राप्त कर रखा है। गुरु स्वयं अमरत्व के द्वार पर खड़े हो कर अभय हस्त से संघर्षरत साधकों को उत्थान की ओर अग्रसर करते हैं और दूसरे वरदहस्त से सच्चिदानन्द राज्य में प्रवेश दिलाते हैं।

सद्गुरु भगवान्

भगवान् के आदेशानुसार ही गुरु बनने का अधिकार मिलता है। केवल शास्त्रीय ज्ञान से ही कोई गुरु नहीं बन सकता। जिस वेदवेत्ता ने भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त कर लिया है, वही गुरु बन सकता है। जीवन्मुक्त को ही गुरु बनने का अधिकार है, वही सद्गुरु है, वही ब्रह्म तथा परम सत्ता का प्रतीक है, वही ब्रह्मवेत्ता है।

सद्गुरु के पास अनेक सिद्धियाँ रहती हैं, सारी ईश्वरीय सम्पत्ति तथा ऐश्वर्य का वह स्वामी है।

सिद्धियों की प्राप्ति महत्ता की कसौटी नहीं है, न ही इस बात का प्रमाण है कि सिद्धियों के स्वामी ने भगवद्-साक्षाकार कर लिया है। सद्गुरु तो सिद्धियों को दर्शाते भी नहीं। वे जिज्ञासुओं को प्रोत्साहित करने के लिए उनमें श्रद्धा-विश्वास बढ़ाने के लिए कभी-कभी चमत्कार दिखा भी देते हैं।

सद्गुरु तो स्वयं ब्रह्म ही है। वह आनन्द, ज्ञान तथा करुणा का सागर है। वह आत्मरूपी जहाज का नायक है। वह आनन्द का उत्पादन स्रोत है। वह आपकी सभी बाधाएँ तथा चिन्ताएँ नष्ट करता है। दिव्यता की ओर तुम्हारा पथ-प्रदर्शन वही करता है, तुम्हारे अज्ञान के आवरण को भी वही हटाता है। वह तुम्हें दिव्य तथा अमर बना देता है। तुम्हारी हीन, तामसिक प्रवृत्तियों को रूपान्तरित करने में केवल वही समर्थ है। वह भवसागर में डूबने से बचा कर ज्ञान की डोरी से

तुम्हें बाहर निकालता है। उसको मनुष्य मात्र नहीं मानना चाहिए। यदि कहीं ऐसा समझते रहे तो आप पशुवत् ही रहेंगे। अपने गुरु की सदैव पूजा तथा आदर-सत्कार करिए, भावना से ओत-प्रोत रहिए।

गुरु ही ईश्वर है। उनके वाक्य को भगवद्-वाक्य मानिए। वे भले ही शिक्षा न दें, उनकी उपस्थिति ही प्रेरणा-स्रोत होने के कारण प्रगति-पथ की ओर प्रेरित करती है। उनके सत्संग से आत्म-प्रकाश की प्राप्ति होती है। उनके सान्निध्य में रहने से ही आध्यात्मिक विद्या आ जाती है। गुरु-ग्रन्थ साहब पढ़िए, आपको गुरु-महिमा का ज्ञान हो जायेगा।

मानव को मानव द्वारा ही शिक्षा दी जा सकती है, इसीलिए भगवान् भी मानव-शरीर के द्वारा ही शिक्षा देते हैं। मानवीय आदर्श की पूर्णता गुरु में ही हो सकती है। आपको उन्हीं के आदर्शों के साँचे में अपने-आपको ढालना है। आपका मन स्वत: ही स्वीकार करेगा कि यही महान् व्यक्ति पूजा-अर्चना का योग्यतम अधिकारी है।

गुरु मोक्ष का द्वार है। वही इन्द्रियातीत सत् तथा चित् का दाता है, परन्तु प्रवेश करने का उद्यम तो शिष्य को स्वयं करना होगा। गुरु सहायता देंगे, किन्तु साधना करने का सारा उत्तरदायित्व शिष्य पर ही रहेगा।

गुरु की आवश्यकता अनिवार्य

अध्यात्म-मार्ग पर आरूढ़ साधक के लिए प्रारम्भ में गुरु की आवश्यकता होती है। जलती हुई मोमबत्ती ही दूसरी मोमबत्ती को जला सकती है, इसी प्रकार एक ज्ञानी ही दूसरे की ज्ञान-ज्वाला को प्रदीप्त कर सकता है।

कई मनुष्य स्वतन्त्र रूप से कई वर्षों तक ध्यानाभ्यास करते रहते हैं, तब जा कर उन्हें गुरु की आवश्यकता का भान होने लगता है, क्योंकि जब कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और बाधाओं को दूर करने में समर्थ नहीं होते तब वे गुरु की खोज में निकलते हैं।

जो बद्रीनाथ-धाम की यात्रा सफलतापूर्वक कर आया है वही तो बद्रीनाथ का मार्ग प्रशस्त करेगा, अध्यात्म-मार्ग में तो पथ-प्रशस्त करना और भी कठिन होता है। मन तो कई बार आपको पथ-भ्रष्ट करता है। केवल गुरु ही आपको पतन के गर्त से बचा कर बाधाओं का निवारण कर सन्मार्ग पर ले जाता है। मोक्ष का मार्ग और बन्धन के मार्ग का अन्तर भी वे ही बताते हैं। यदि यह सहायता न मिली तो बद्रीनाथ जाने की इच्छा रखते हुए भी आप दिल्ली पहुँच जायेंगे।

शास्त्र तो सघन वन प्रदेश की तरह हैं जिनमें कई सन्दिग्ध स्थल पड़ते हैं, इसी प्रकार शास्त्रों में अनेकार्थक परिच्छेद होते हैं। परस्पर विरोधी अंश भी मिलते हैं, रहस्यमय अर्थों वाले परिच्छेद होते है, कई एक के अर्थ अनेक प्रकार से हो सकते हैं, कई स्थलों का पारस्परिक सन्दर्भ मिलाना पड़ता है, अत: ऐसे स्थलों पर गुरु जी की आवश्यकता रहती है जो ठीक अर्थ बता कर सन्देह दूर करते हैं और शिक्षा का सार बताते हैं।

अध्यात्म-मार्ग में साधक के लिए सद्गुरु अति आवश्यक हैं। गुरु ही तुम्हें दोष रहित बनायेंगे; क्योंकि अहंकारवश तुम अपनी त्रुटियाँ स्वयं नहीं निकाल सकते, जैसे अपनी पीठ देखना कठिन है वैसे ही अपने दोषों को ढूँढ़ निकालना अति कठिन है। गुरु के सान्निध्य में रह कर ही हम अपनी आसुरी सम्पत्तियों का उन्मूलन कर सकते हैं।

गुरु की शरण में रह कर साधक पथभ्रष्ट होने से बचा रहता है, गुरु का सान्निध्य अथवा सत्संग एक ऐसा कवच है जो भौतिक जगत् की प्रतिकूल शक्तियों तथा प्रलोभनों से बचाता है।

(क्रमशः)

(अनुवादक : श्री स्वामी अर्पणानन्द जी महाराज)

बाल जगत्

विद्यार्थी जीवन में सफलता

ज्योति-सन्तानो!

नमस्कार! ॐ नमो नारायणाय!

नम्रता

नम्रता वह सद्गुण है जो दूसरों के हृदय को अपने वश में कर लेता है। इसके साथ यदि सुन्दर आकृति हो, मधुर वाणी हो, कला और विज्ञान का अच्छा ज्ञान हो तो व्यक्तित्व में चार चाँद लग जाते हैं। जब किसी व्यक्ति से मिलना हो तो मिलने का ढंग जान लेना चाहिए। किस प्रकार बातें की जाती हैं और कैसा व्यवहार किया जाता है,–यह सब अच्छी तरह जान लेना चाहिए। व्यवहारकुशलता एक अनिवार्य सद्गुण है। दम्भी, हठी, दुराचारी व्यक्ति का व्यक्तित्व कभी भी तेजस्वी तथा आकर्षक नहीं हो सकता। सभी उसे नापसन्द करते हैं।

स्वभाव सदा खुशदिल होना चाहिए। चेहरे पर मुसकान और आनन्द खिले रहने चाहिए। इससे व्यक्तित्व का विकास होता है। सदा प्रसन्न-चित्त रहोगे, तो बड़े लोग आपको अच्छा मानेंगे। किन्तु प्रसन्न-चित्त और सतत मुसकान के साथ-साथ मिलनसारिता तथा विनीत स्वभाव भी होना चाहिए। यदि यह गुण हुए, तो मिलने वाले व्यक्ति को प्रभावित किया

जा सकता है। उस व्यक्ति को जो-कुछ कहना है, धीरे-धीरे अच्छी तरह सोच-विचार और याद करके कहो। कहते समय जल्दबाजी और अव्यवस्थित होने के कारण कुछ और न कह जाओ। सोच-समझ कर धीरे-धीरे बात करोगे, तो वह व्यक्ति ध्यानपूर्वक आपकी बातें सुनेगा। बातचीत करते समय उत्तेजित न हो जायें और न घबरायें ही। विवाह-बारात में जिस प्रकार गैस बत्ती की रोशनी का वाहक सन्नद्ध खड़ा रहता है, उसी प्रकार अकड़ कर खड़े न रहिए। सिर झुकाकर विनम्रतापूर्वक अभिवादन करिए। तात्पर्य यह है कि बातें करते समय हाव-भाव इस प्रकार से व्यवस्थित होने चाहिए कि सुनने वाले का हृदय आपके व्यवहार से मोहित हो जाये। यदि व्यक्तित्व प्रभावुक है तो समझ लीजिए कि वह आपकी स्थायी सम्पत्ति है। यदि आप इसे पाने के लिए कृतकर्म हो जायें तो सफलता के यशभागी बनेंगे। तेजस्वी व्यक्तित्व के द्वारा नाम और यश, धन और सफलता के फूलों का मुकुट प्राप्त कीजिए।

—स्वामी शिवानन्द

सद्गुणों का अर्जन

दानशीलता (Charity)

दानशीलता दान देना है। यह दूसरों के विषय में सोचने तथा उनका भला करने का स्वभाव है।

सच्ची दानशीलता पुरस्कार एवं प्रतिदान का विचार किये बिना दूसरों के लिए उपयोगी बनने की आकांक्षा है। दानशीलता प्रेम का क्रियान्वित रूप है। प्रत्येक अच्छा कार्य दान है।

अनिच्छुक हृदय से दिया गया दान, दान नहीं है।

मौन रह कर दान करिए। इसे विज्ञापित मत करिए। आपका दायाँ हाथ क्या करता है, बायें हाथ को यह ज्ञात नहीं होना चाहिए। जब लोग आपके दानशील स्वभाव की प्रशंसा करें, तो आपको गर्वित नहीं होना चाहिए। आपमें प्रतिदिन दान कार्य करने की उत्कण्ठा होनी चाहिए। आपको दान कार्य करने के अवसर उत्पन्न करने चाहिए।

निर्धन, रुग्ण, असहाय तथा निराश्रित को दान दीजिए। उस मनुष्य को धन्यवाद दीजिए जो दान द्वारा आपको अपनी सेवा का अवसर देता है। उचित मानसिक भाव से दीजिए तथा दानपूर्ण कार्यों से परमात्मा का साक्षात्कार करिए।

—स्वामी शिवानन्द

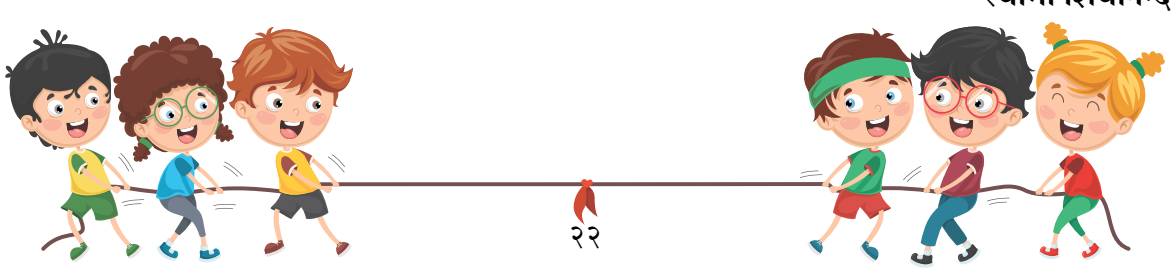

दुर्गुणों का नाश

लोभ (Avarice)

लोभ धन-प्राप्ति की तीव्र इच्छा है। यह अत्यधिक लोलुपता अथवा लालच है।

लोभ अशमनीय है। यह अतिशय असन्तोष एवं अशान्ति को जन्म देता है। यह शान्ति, ज्ञान एवं भक्ति का शत्रु है।

स्वर्ण में वृद्धि तथा बैंक में धनराशि में वृद्धि के साथ-साथ लोभ में भी वृद्धि होती है। समस्त दुर्गुणों में से हृदय को सर्वाधिक कलुषित-भ्रष्ट करने वाला दुर्गुण लोभ ही है।

एक लोभी व्यक्ति धन एकत्रित करने हेतु अमर्यादित रूप से उत्कण्ठित होता है। वह लाभ प्राप्ति का लालच करता है। वह सदैव लेना-पाना चाहता है।

मुक्तहस्तता, उदारता, दानशीलता एवं वदान्यता आदि लोभी स्वभाव के विपरीत शब्द हैं।

—स्वामी शिवानन्द

सर्वांगासन

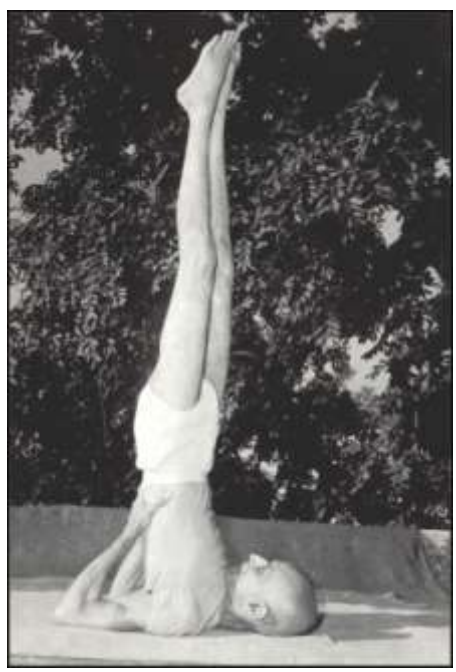

विधि : फर्श पर एक मोटा कम्बल बिछाइए। पैरों को फैला कर पीठ के बल इस प्रकार लेट जायें कि एड़ियाँ और घुटने परस्पर मिले हों, हाथ शरीर के पार्श्व में, पास ही रखे हुए हों तथा हथेलियों का रुख फर्श की ओर हो। धीरे-धीरे श्वास लें। साथ ही बिना घुटनों को मोड़े पैरों को उठायें। धीरे से धड़ को उठायें तथा कोहनियों को मोड़ कर इसको पृष्ठ भाग में (मध्य मेरुदण्ड में) हाथों का सहारा दें। रीढ़ की हड्डी सीधी अर्थात् फर्श पर लम्बवत् रखें। कन्धों का पृष्ठभाग, ग्रीवा तथा शिर के शीर्ष का पश्च भाग फर्श को स्पर्श करते रहें। चिबुक को वक्ष पर दृढ़तापूर्वक दबाये रखना चाहिए। जब आप मेरुदण्ड को खड़ा कर दें और आसन पर सन्तुलन स्थापित कर लें तब शनैः-शनैः पैर की उँगलियों को ऊर्ध्वमुखी करते हुए पैरों को फैला दें। पैर, पीठ और मेरुदण्ड को सामान्य श्वास-प्रश्वास के साथ एक लम्बवत् सीधी पंक्ति में, विश्राम की स्थिति में खड़ा रखें।

कण्ठ पर चित्त एकाग्र करें जहाँ स्वच्छ रुधिर अधिक मात्रा में प्रवाहित हो रहा है, जो (कण्ठ की)

अवटु और परावटु ग्रन्थियों के अन्तःस्राव को गति प्रदान करता है। यह सर्वाधिक महत्त्व का है।

धीरे-धीरे श्वास छोड़ें। बिना झटका दिये पैरों को नीचे करें और हाथों को भूमि पर रखें । जब पैरों को अपनी पूर्व-स्थिति में नीचे ला रहे हों तो आपको भूमि से शिर नहीं उठाना चाहिए। धीमे से नीचे खिसकते हुए चित लेट जायें और कुछ मिनटों तक शवासन में विश्राम करें। इस आसन का समय दैनिक अभ्यास के लिए एक मिनट से तीन मिनट तक भिन्न-भिन्न हो सकता है।

लाभ : इस आसन के अभ्यास के समय शरीर के प्रत्येक अंग का व्यायाम हो जाता है। अन्तःस्रावी प्रणाली से अवटु (कण्ठ की) और परावटु ग्रन्थियों की ओर रुधिर-संचार निर्देशित होता है। ग्रीवा-प्रदेश की स्नायु और कन्धे की मांसपेशियों को लचीलापन प्रदान कर यह उनका प्रसारण कर देता है। यह रोगग्रस्त स्फीतशिराओं को सहायता प्रदान करता, पीठ और ग्रीवा की मांसपेशियों को सशक्त बनाता तथा हाथ की मांसपेशियों और शरीर को सम्पूर्णतया आरोग्य प्रदान करता है। यह अपशिष्ट द्रव्य निर्मित होने को रोकता तथा जीव-विष (toxin) को हटाता है और शरीर के सम्पूर्ण रुधिर-संचार को नियमित करता है।

चेतावनी : उच्च एवं निम्न रक्तचाप, हृदय-रोगों, कर्ण-पूय, विस्थापित चक्षु-पटल अथवा अन्य पुराने नेत्र-रोगों से ग्रस्त रोगियों को यह आसन नहीं करना चाहिए। पन्दरह वर्ष से कम आयु के बालकों को भी इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

— स्वामी चिदानन्द

सुखपूर्वक प्राणायाम

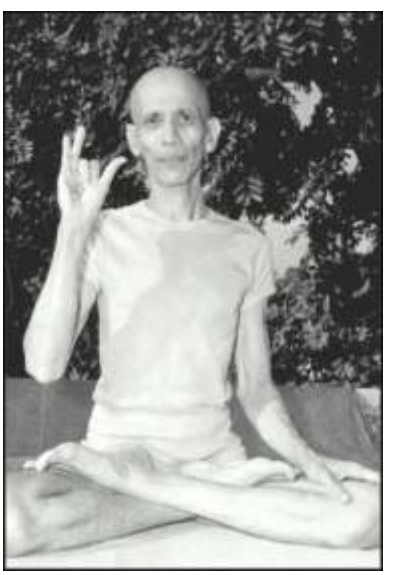

विधि : किसी भी सुखद आसन में बैठें। मेरुदण्ड, ग्रीवा और शिर सीधा रखें। मध्यमा एवं तर्जनी उँगलियाँ मुड़ी हुई तथा अन्य तीनों उँगलियाँ खुली रखें। दाहिने अँगूठे से दाहिना नासापुट बन्द करें। बिना कोई ध्वनि किये बायें नासापुट से बहुत ही धीरे-धीरे श्वास लें (पूरक)। तब दाहिने हाथ की कनिष्ठिका एवं अनामिका उँगलियों से बायाँ नासारन्ध्र बन्द करें। तब दाहिने अँगूठे को ढीला कर दाहिने नासापुट से अति-धीमी गति से श्वास छोड़ें (रेचक)। अब अर्ध-प्रक्रिया पूरी हुई। दाहिने नासापुट से धीरे-धीरे और सुव्यवस्थित रूप से वायु भीतर लें और बायें नासापुट से धीरे-धीरे श्वास निकालें। यह एक आवर्तन पूरा हुआ।

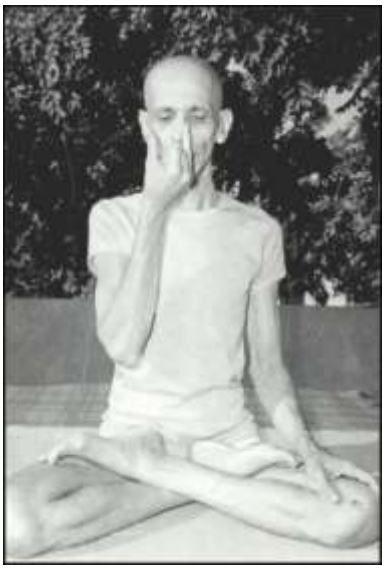

पूरक और रेचक का अनुपात १:२ होना चाहिए। प्रथम १५ दिनों में ५ सेकण्ड तक श्वास लें और १० सेकण्ड तक श्वास निकालें। अगले (द्वितीय) पक्ष में १० सेकण्ड श्वास लेने की और २० सेकण्ड श्वास छोड़ने की समयावधि बढ़ायें। पूरक और रेचक करते समय फुफ्फुसों का क्रमशः प्रसारण और संकुचन करें।

तीन मास के नियमित और सतत अभ्यास के पश्चात् आप श्वासरोक (कुम्भक) भी प्रारम्भ कर सकते हैं। श्वास लेने, रोकने और छोड़ने के समय का अनुपात १:२:२ होना चाहिए अर्थात् यदि आप ५ सेकण्ड तक श्वास लें, पूरक करें तो कुम्भक और रेचक प्रत्येक १० सेकण्ड तक का होना चाहिए। जैसे-जैसे आप अभ्यास में प्रगति करें, आप १:४:२ का अनुपात कर सकते हैं। कुम्भक के समय आप जालन्धर-बन्ध कर सकते हैं। इसकी विधि निम्नांकित है :

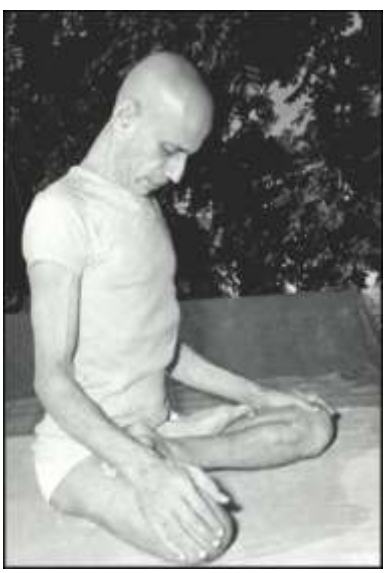

श्वास भीतर लेने के पश्चात् जब श्वास रोके हुए हों, ग्रीवा धीरे से झुकायें और जत्रुक (हँसली) पर ठुड्डी को टिका दें। यह बन्ध वायु के शिर की ओर ऊपर जाने के दबाव को रोकता है।

रेचक से पूर्व शिर धीरे-धीरे उठायें, उसे सीधा करके रखें, तब रेचक करें। यह जालन्धर-बन्ध का मोचन है।

चेतावनी : यदि आप शिरदर्द, शिर का भारीपन, चक्कर आना, बेचैनी आदि का अनुभव करते हैं तो इसका आशय है कि आप अधिक परिश्रम एवं फुफ्फुसों पर अधिक दबाव डाल रहे हैं। अतएव आपको कुम्भक की समयावधि घटा देनी चाहिए। प्राणायाम के सही अभ्यास का प्रथम लक्षण है —ताजगी, शक्ति एवं शरीर तथा मन का हलकापन अनुभव होना। यदि आप इसका नकारात्मक परिणाम अनुभव करें तो कुम्भक के अभ्यास को तुरन्त बन्द कर दें और किसी कुशल व्यक्ति से परामर्श लें।

लाभ : यह प्राणायाम समस्त व्याधियों का हरण करता, नाड़ियों को शुद्ध करता, ध्यान के लिए मन को स्थिर करता, जठराग्नि और क्षुधा को उद्दीप्त करता तथा ब्रह्मचर्य-पालन में सहायक होता है।

— स्वामी चिदानन्द

परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का १३३ वाँ जन्मोत्सव

करुणावरुणागारं तरुणारुणतेजसम् ।
शरणागतमन्दारं शिवानन्दं गुरुं भजे ।।

''मैं उन गुरुदेव शिवानन्द जी की वन्दना करता हूँ जो करुणा के सागर हैं, जो प्रातःकालीन उदित होते हुए सूर्यदेव की आभा जैसे तेज से सम्पन्न हैं, और जो भी उनके पावन चरणों की शरण में आ जाते हैं उन सबके लिए जो मन्दार कल्पवृक्ष के समान फल-प्रदाता हैं।''

मुख्यालय आश्रम में ८ सितम्बर २०२० को परम आराध्य सद्गुरुदेव की १३३ वीं जयन्ती का महोत्सव अत्यन्त श्रद्धा एवं गहन भक्ति-भाव सहित मनाया गया।

इस शुभ एवं सुधन्य दिवस के उपलक्ष्य में पूर्वाह्न में, अत्यन्त भव्य रूप में सुसज्जित समाधि मन्दिर में एक विशेष सत्संग का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम सद्गुरुदेव की समाधि पर स्थापित किये गये शिवलिंग की पारम्परिक पूजा की गयी। तदुपरान्त आश्रम के संन्यासियों एवं ब्रह्मचारियों द्वारा सद्गुरुदेव की पावन पादुकाओं की अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति सहित पूजा की गयी। पादुका पूजा के उपरान्त भजन-कीर्तन के माध्यम से सद्गुरुदेव की महिमा का वर्णन किया गया। फिर परम पूज्य श्री स्वामी योगस्वरूपानन्द जी महाराज, परम पूज्य श्री स्वामी निर्लिप्तानन्द जी महाराज तथा परम पूज्य श्री स्वामी पद्मनाभानन्द जी महाराज के आशीर्वचन हुए। श्रद्धेय स्वामी जी महाराज ने अपने संक्षिप्त सन्देशों के माध्यम से प्रत्येक साधक को अपने जीवन का परम लक्ष्य यथा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के

लिए साधना में तत्पर हो जाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि श्रद्धेय गुरुदेव का जन्मोत्सव मनाने के लिए यही सर्वाधिक उपयुक्त विधि है।

इस पावन दिवस के उपलक्ष्य में सद्गुरुदेव की चार पुस्तकें तथा 'डिवाइन लाइफ' एवं 'दिव्य जीवन' मासिक पत्रिकाओं के विशेषांक भी विमोचित किये गये। वर्ष २०२२, परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की 'पावन जन्म शताब्दी' का शुभ वर्ष है। मुख्यालय आश्रम इस पावन अवसर के उपलक्ष्य में पूज्य स्वामी जी महाराज की पुस्तिकाएँ यथासम्भव संख्या में निःशुल्क वितरण हेतु 'जन्म शताब्दी शृंखला' के अन्तर्गत प्रकाशित करने जा रहा है। इसी को दृष्टि में रखते हुए, इस पावन दिवस पर पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की एक पुस्तक 'गुरु–डिसाइपल रिलेशनशिप' तथा दो पुस्तिकाएँ 'दी इन्स्क्रूटेबलगुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्दा' तथा 'दी एटर्नल गॉस्पल ऑफ दी भगवद्गीता' भी विमोचित की गयीं। आरती एवं विशेष प्रसाद वितरण सहित कार्यक्रम समाप्त हुआ। इस महोत्सव में सम्मिलित हो कर सभी ने स्वयं को सुधन्य अनुभव किया।

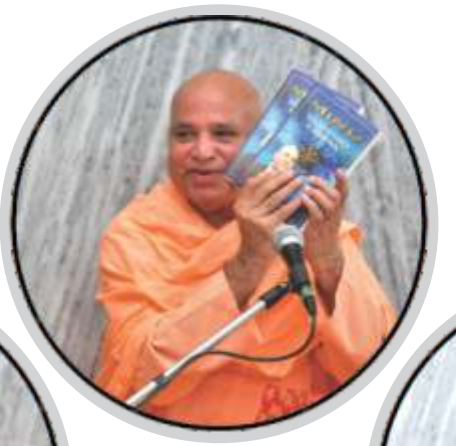

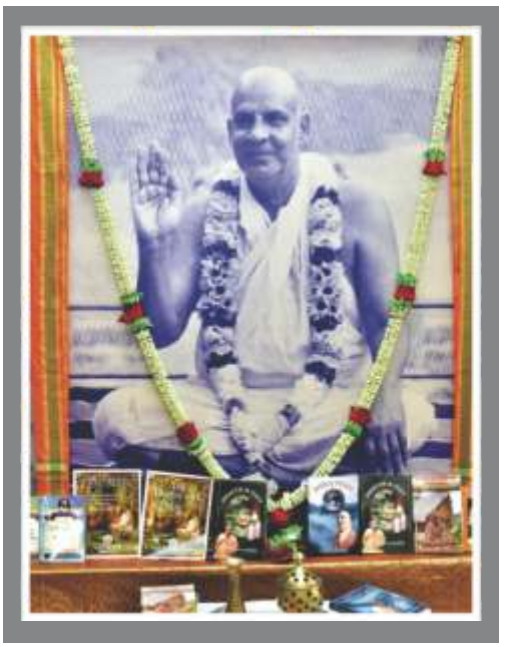

सर्वशक्तिमान् परमात्मा तथा हमारे परम आराध्य सद्गुरुदेव की भरपूर कृपावृष्टि सब पर हो।

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की १०४ वीं जयन्ती का महोत्सव

मुख्यालय आश्रम में २४ सितम्बर २०२० को परम आराध्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की १०४ वीं जयन्ती का महोत्सव अत्यन्त पावनता सहित मनाया गया।

समारोह का प्रारम्भ प्रातः ९ बजे पावन समाधि मन्दिर में पादुका पूजा से किया गया। पूजा के तुरन्त पश्चात् एक संक्षिप्त सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें आश्रम के संन्यासियों एवं ब्रह्मचारियों द्वारा परम पूज्य स्वामी जी महाराज के चरणकमलों में स्नेहपूर्ण श्रद्धांजलि के रूप में अत्यन्त मधुर भजन-कीर्तन समर्पित किये गये।

तदुपरान्त परम पूज्य श्री स्वामी योगस्वरूपानन्द जी महाराज, परम पूज्य श्री स्वामी निर्लिप्तानन्द जी महाराज, परम पूज्य श्री स्वामी पद्मनाभानन्द जी महाराज तथा परम पूज्य श्री स्वामी अद्वैतानन्द जी महाराज ने अपने संक्षिप्त सन्देशों में परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दिव्य व्यक्तित्व की महिमा का वर्णन करते हुए सभी उपस्थित साधक-भक्तों को स्वामी जी महाराज के आदर्श उदाहरण का अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया।

इस पावन अवसर के उपलक्ष्य में पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की एक पुस्तक तथा दो पुस्तिकाओं का विमोचन भी किया गया। २०२० का यह वर्ष परम पूज्य श्री स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज की जन्म शताब्दी का पावन वर्ष है। मुख्यालय आश्रम द्वारा ७ मई को पूज्य श्री स्वामी जी महाराज का जन्म शताब्दी महोत्सव मनाने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों की योजना बनायी गयी थी, किन्तु प्रशासन द्वारा लॉकडाउन लगा दिये जाने के कारण वह सब कार्यान्वित नहीं हो सके। तथापि पूज्य श्री स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज की दो पुस्तकें, 'स्पौटलाइट्स ऑन दी रामायण' तथा 'मैडिटेशन एण्ड इट्स युटिलिटी विद प्रैक्टिकल हिन्ट्स' २४ सितम्बर को उनके जन्म शताब्दी के पावन अवसर के उपलक्ष्य में प्रेमपूर्ण श्रद्धांजलि के रूप में विमोचित की गयीं। आरती एवं प्रसाद वितरण के साथ सत्संग समाप्त हुआ।

सर्वशक्तिमान् परमात्मा, सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज, परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज तथा परम पूज्य श्री स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज के भरपूर आशीर्वाद सभी पर हों!

शिवानन्द होम द्वारा सेवा

''शिवानन्द होम उन एकाकी एवं मरणासन्न लोगों की प्रेमपूर्ण देख-रेख का एक केन्द्र है, जो सड़क के किनारे पड़े मिलते हैं, जिनकी देख-रेख करने वाला कोई नहीं है, जिन लोगों के रहने के लिए कोई घर नहीं है, जिनका न तो स्थायी और न ही अस्थायी रूप से कोई ठिकाना है, जो रोगग्रस्त हो जाते हैं, गुम हो जाते हैं अथवा अपने परिवार द्वारा त्याग दिये जाते हैं।''

—परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

अपने जीवन के अन्तिम दश वर्षों से वह सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पावन चरणों में, शिवानन्द होम में अन्तेवासी रोगी रहा था। ९० वर्ष की आयु का यह एक विनम्र एवं मौन-प्रिय साधु था जिसे गंगा माँ की ओर उन्मुख अत्यन्त सुन्दर गंगा एवं हिमालय दर्शन वाले चिदानन्द भवन में रहना अति प्रिय था। उसने कभी भी अपने अतीत एवं गत जीवन से सम्बन्धित कोई बात नहीं की, वह सदैव वर्तमान में ही रहता था। उसका पहरावा अत्यन्त सौम्य तथा आहार अति सूक्ष्म था। जब स्नानागार में गिर जाने के कारण उसकी टाँग में चोट लगी और शैयाग्रस्त होने से दैनिक कार्य-कलाप के लिए सहायता की आवश्यकता होने लगी तब उसे पुनः मुख्य भवन में ले आना पड़ा। दूसरों पर आश्रित हो जाने और स्वयं उठ कर बैठ भी न सकने से उसे प्रतीत होने लगा कि उसका जीवन उससे छिन गया है और अब उसका जाने का समय आ गया है। एक दिन उसने स्वयं अपने हाथ से भोजन लिया, पूरा भोजन समाप्त किया और फिर एक-दो कठिन श्वास लेते हुए चुपचाप देह त्याग दी। सभी अन्तेवासी और विशेष रूप से उसके सहकक्षी उसे स्मरण करते हैं, उसकी मौन एवं शान्त उपस्थिति का अभाव उसके वार्ड के सभी साथी और होम के सभी निवासी अनुभव करते हैं। ईश्वर दिवंगत आत्मा को शाश्वत शान्ति प्रदान करें!

महिला रोगिणियों में से एक अन्य महिला जो गत सप्ताह गिर जाने के कारण गहन-मूर्छा में चली गयी थी, का भी श्री कृष्ण जन्माष्टमी के पावन दिन देहान्त हो गया। कुछ वर्ष पहले उसे शिवानन्द होम में भरती किया गया था और होम में प्रवेश करने के साथ ही जो प्रथम शब्द उसने कहे, वह थे कि उसकी आयु १०० वर्ष से भी बहुत ऊपर है! वह स्थानीय भाषा ही बोलती थी और ऐसा आभास होता है कि उसके पति की मृत्यु हो जाने के बाद उसके दोनों बच्चों ने उसे घर से निष्कासित कर दिया था। शिर से पाँव तक उसके पूरे शरीर पर पुरानी चोटों के चिह्न थे तथा कूल्हे की चोट के कारण शल्य-चिकित्सा भी की गयी प्रतीत होती थी जिससे यह स्पष्ट था कि उसका गत जीवन सरल नहीं रहा होगा। चल सकना यद्यपि उसके लिए बहुत कठिन था फिर भी जितना भी सम्भव हो पाता उतना प्रत्येक कार्य वह स्वयं ही किसी-न-किसी तरह हठपूर्वक करने का प्रयास करती थी तथा अन्य किसी की सहायता लेना स्वीकार नहीं करती थी। किन्तु जब ऐसा समय आया कि उससे और अधिक कार्य करना सम्भव न रहा तब उसने अपना हठ एवं कुछ भी करने का प्रयत्न पूर्णतया छोड़ दिया। तब उसने स्वयं को उठाने, खिलाने, स्नान कराने एवं हर तरह की सहायता दूसरों से लेने की स्वीकृति दे दी। एक वर्ष से भी अधिक समय तक वह पूर्णतया शैयाग्रस्त रही, फिर बिना किसी कठिनाई के अत्यन्त सहजता से उसने एक दिन अन्तिम श्वास ली, और फिर परम्परानुसार शिवानन्द होम द्वारा उसका यथाविधि अन्तिम संस्कार करके माँ गंगा में अस्थि-विसर्जन कर दिया गया। परमात्मा दिवंगत आत्मा को परम शान्ति प्रदान करें। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

''हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें। तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें। सदा तुम्हारा ही स्मरण करें। सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें। तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो। सदा हम तुममें ही निवास करें।''

—परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

डोनेशन सम्बन्धी निर्देश

द डिवाइन लाइफ सोसायटी को भेजी जाने वाली दानराशि ऋषिकेश में देय बैंकड्राफ्ट अथवा चेक अथवा इलेक्ट्रानिक मनी आर्डर (E.M.O.) द्वारा "The Divine Life Society", Shivanandanagar, Uttarakhand के नाम भेजी जा सकती है। कृपया ड्राफ्ट अथवा चेक अथवा ई. एम. ओ. के साथ एक पत्र में दानराशि का उद्देश्य, अपना डाक पता, फोन नम्बर, ईमेल आई डी तथा पैन नम्बर लिखकर भेजें।

ऑनलाइन डोनेशन

जो दानराशि भेजने हेतु ऑनलाइन डोनेशन सुविधा का उपयोग करना चाहते हैं, वे वेब एड्रेस https://donations.sivanandaonline.org के माध्यम से अथवा हमारी वेबसाइट www.sivanandaonline.org में दिये गये 'ऑनलाइन डोनेशन' लिंक के माध्यम से इसका उपयोग कर सकते हैं।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्यालय के सदस्यता–शुल्क एवं शाखाओं के सम्बद्धता–शुल्क की दरें

१.	नवीन सदस्यता–शुल्क*		₹ १५०/–
	प्रवेश–शुल्क	₹ ५०/–	
	सदस्यता–शुल्क	₹ १००/–	
२.	सदस्यता नवीकरण–शुल्क (वार्षिक)		₹ १००/–
३.	नयी शाखा खोलने का शुल्क**		₹ १०००/–
	प्रवेश–शुल्क	₹ ५००/–	
	सम्बद्धता–शुल्क	₹ ५००/–	
४.	शाखा–सम्बद्धता नवीकरण शुल्क (वार्षिक)		₹ ५००/–

* सदस्यता के इच्छुक प्रार्थी कृपया प्रार्थना–पत्र के साथ अपना फोटो पहचान–पत्र (Photo Identity) तथा निवास–स्थान के प्रमाण–स्वरूप कोई दस्तावेज (Residential Proof) भेजें।

**नयी शाखा खोलने के लिए मुख्यालय से लिखित अनुमति लेनी होगी।

⇨ कृपया सदस्यता–शुल्क और शाखा–सम्बद्धता–शुल्क ऋषिकेश में स्थित किसी भी बैंक के नाम बने डिमांड ड्राफ्ट अथवा चेक द्वारा भेजें।

डी एल एस शाखाओं के प्रतिवेदन

भारतीय शाखाएँ

आगरा (उत्तर प्रदेश): शाखा द्वारा प्रत्येक रविवार को प्रार्थना, ॐ साधना और मन्त्र जप, मंगलवार को हवन, ॐ साधना और मन्त्र जप तथा इसके साथ ही दैनिक योग साधना के कार्यक्रम संचालित किये जाते रहे हैं।

बरगढ़ (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, प्राणायाम और ध्यान, सोमवारों को रुद्राभिषेक, गुरुवारों को गुरु पादुका पूजा की जाती रही। ११ अगस्त को श्री कृष्ण जन्माष्टमी तथा २२ को श्री गणेश चतुर्थी मनायी गयी।

छत्रपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, प्रत्येक गुरुवार को नियमित सत्संग तथा मासिक जयन्ती दिवस ८ एवं २४ को पादुका पूजा और अर्चना की जाती रही। ५ जुलाई को गुरुपूर्णिमा तथा १४ को सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का पुण्यतिथि आराधना दिवस पादुका पूजा और प्रार्थनाओं सहित मनाया गया। २७ को तुलसीदास जयन्ती मनायी गयी।

चाँदपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, साप्ताहिक सत्संग शनिवार को, गुरु पादुका पूजा गुरुवार को और चल सत्संग ८ और २४ को किये जाते रहे। ५ जुलाई को श्री गुरुपूर्णिमा तथा १४ को सद्गुरुदेव का ५७ वाँ पुण्यतिथि आराधना दिवस भजन, पादुका पूजा और प्रवचनों सहित मनाया गया। विश्व-शान्ति हेतु १६ को सुन्दरकाण्ड का पारायण किया गया। १६ अगस्त को परम पूज्य श्री स्वामी

चिदानन्द जी महाराज का १२ वाँ पुण्यतिथि आराधना दिवस मनाया गया। १८ को श्री कृष्ण जन्माष्टमी द्वादशाक्षरी मन्त्र जप सहित मनायी गयी, तथा २७ से ३१ अगस्त तक श्रीमद्भागवतपुराण के पारायण एवं प्रवचन का आयोजन किया गया।

ढेंकानाल (ओडिशा): शाखा द्वारा गुरुपूर्णिमा ५ जुलाई को तथा गुरुदेव का आराधना दिवस १४ को पादुका पूजा, भजनों और गुरु-भक्ति पर प्रवचनों सहित मनाया गया।

लखनऊ (उत्तर प्रदेश): कोविड-१९ के समय में शाखा द्वारा ऑडिओ-विजुअल सत्संग २ अगस्त को किया गया। इसके अतिरिक्त महामृत्युञ्जय मन्त्र जप प्रतिदिन नियमित रूप से चलता रहा।

नन्दिनीनगर (छत्तीसगढ़): शाखा द्वारा दैनिक प्रातःकालीन प्रार्थना और सायंकालीन सत्संग, साप्ताहिक सत्संग प्रत्येक गुरुवार को तथा शनिवार को सुन्दरकाण्ड एवं हनुमान चालीसा सहित मातृ सत्संग किये जाते रहे। प्रत्येक मास की ३ को महामन्त्र कीर्तन किया गया। २२ से ३१ अगस्त तक श्री गणेश पूजा अर्चना, गणेश स्तोत्रों तथा हवन सहित की गयी।

स्टील टाउनशिप, राउरकेला (ओडिशा): शाखा द्वारा गुरुवारों को गुरु पादुका पूजा, शनिवारों को स्वाध्याय, सोमवारों को योग एवं संगीत की निःशुल्क कक्षाएँ पूर्ववत् चलती रहीं। इसके अतिरिक्त विशेष गतिविधियों में ५ जुलाई को गुरुपूर्णिमा, १४ को सद्गुरुदेव की पुण्यतिथि आराधना, ११ अगस्त को श्री कृष्ण जन्माष्टमी तथा १६ को परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की पुण्यतिथि आराधना मनाने के कार्यक्रम रहे।

हिन्दी में उपलब्ध पुस्तकों की नवीनतम सूची

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज कृत

अच्छी नींद कैसे सोयें	₹ ७०/-
अध्यात्मविद्या	१४०/-
कर्म और रोग	२५/-
कर्मयोग-साधना	१३०/-
गीता-प्रबोधिनी	५५/-
गुरु-तत्त्व	५५/-
घरेलू चिकित्सा	१९०/-
जपयोग	१२०/-
जीवन में सफलता के रहस्य	१८५/-
ज्योति, शक्ति और प्रज्ञा	४०/-
दिव्योपदेश	३५/-
देवी माहात्म्य	११५/-
धनवान् कैसे बनें	५०/-
धारणा और ध्यान	१७०/-
ध्यानयोग	१३०/-
प्राणायाम-साधना	७५/-
बालकों के लिए दिव्य जीवन सन्देश	१००/-
ब्रह्मचर्य-साधना	११०/-
भगवान् शिव और उनकी आराधना	१५०/-
भगवान् श्रीकृष्ण	१३०/-
मन : रहस्य और निग्रह	२०५/-
मरणोत्तर जीवन और पुनर्जन्म	१३५/-
मानसिक शक्ति	१३०/-
मूर्तिपूजा का दर्शन और महत्त्व	३०/-
मैं इसका उत्तर दूँ?	१३०/-
श्रीमद्भगवद्गीता	४२५/-
योगाभ्यास का मूलाधार	१८५/-
योगवासिष्ठ की कथाएँ	९०/-
योगासन	११५/-
विद्यार्थी-जीवन में सफलता	६०/-
शिवानन्द-आत्मकथा	₹ १२०/-
सत्संग भजन माला	१६०/-
सत्संग और स्वाध्याय	६०/-
सद्गुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें	१९५/-
सन्त-चरित्र	२३५/-
सौ वर्ष कैसे जियें	९५/-
साधना	३२०/-
स्वरयोग	६०/-
हठयोग	१००/-
हिन्दूतत्त्व-विवेचन	१६०/-

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज कृत

अध्यात्म-प्रसून	३५/-
आलोक-पुंज	१०५/-
ज्योति-पथ की ओर	१०५/-
त्याग : शरणागति	२५/-
भगवान् का मातृरूप	७०/-
मोक्ष सम्भव है!	२५/-
योग-सन्दर्शिका	५५/-
शाश्वत सन्देश	५५/-
शोकातीत पथ	१४०/-
साधना सार	३५/-

अन्य लेखक कृत

एकादशोपनिषदः (मूल मन्त्राः)	१४०/-
गुरुदेव कुटीर में भजन-कीर्तन	५०/-
चिदानन्दम्	२००/-
जीवन-स्रोत	१५०/-
शारीरकमीमांसादर्शनम्	१५/-
शिव स्तोत्र माला	३५/-
श्रीमद्भगवद्गीता (मूलमात्रम्)	१००/-
सर्वस्नेही हृदय	१००/-

५०% अग्रिम। पैकिंग अतिरिक्त । विस्तृत जानकारी के लिए निम्नांकित पते पर सम्पर्क करें :

द डिवाइन लाइफ सोसायटी, पत्रालय : शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत

फोन : ०१३५-२४३४७८०, २४३००४०; E-mail : bookstore@sivanandaonline.org

For online orders and Catalogue : dlsbooks.org

NEW RELEASE!

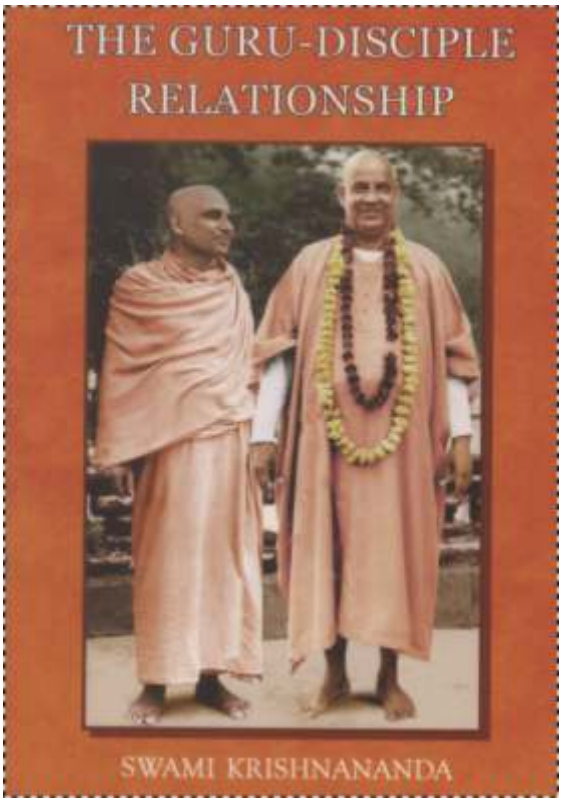

The Guru-Disciple Relationship

Pages: 64 **Price: ₹ 40/-**

With great joy, we are bringing out the booklet 'The Guru-Disciple Relationship' by Worshipful Sri Swami Krishnanandaji Maharaj which consists of an informal discourse given by Pujya Swamiji Maharaj in 1974.

Mind its Mysteries and Control	**Swami Sivananda**	**Price: ₹ 325/-**
Concentration and Meditation	**Swami Sivananda**	**Price: ₹ 285/-**
World Peace	**Swami Sivananda**	**Price: ₹ 120/-**
Health and Diet	**Swami Sivananda**	**Price: ₹ 120/-**
The Quintessence of The Upanishad	**Swami Chidananda**	**Price: ₹ 50/-**
Yoga Sutras of Patanjali	**Dr. (Mrs.) Sita K. Nambiar**	**Price: ₹ 70/-**

बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम

(परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज)

१. **ब्राह्ममुहूर्त-जागरण**—नित्यप्रति प्रातः चार बजे उठिए। यह ब्राह्ममुहूर्त ईश्वर के ध्यान के लिए बहुत अनुकूल है।

२. **आसन**—पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन पर जप तथा ध्यान के लिए आधे घण्टे के लिए पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठ जाइए। ध्यान के समय को शनैः-शनैः तीन घण्टे तक बढ़ाइए। ब्रह्मचर्य तथा स्वास्थ्य के लिए शीर्षासन अथवा सर्वांगासन कीजिए। हलके शारीरिक व्यायाम (जैसे टहलना आदि) नियमित रूप से कीजिए। बीस बार प्राणायाम कीजिए।

३. **जप**—अपनी रुचि या प्रकृति के अनुसार किसी भी मन्त्र (जैसे '**ॐ**', '**ॐ नमो नारायणाय**', '**ॐ नमः शिवाय**', '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**', '**ॐ श्री शरवणभवाय नमः**', '**सीताराम**', '**श्री राम**', '**हरि ॐ**' या गायत्री) का १०८ से २१,६०० बार प्रतिदिन जप कीजिए (मालाओं की संख्या १ और २०० के बीच)।

४. **आहार-संयम**—शुद्ध सात्त्विक आहार लीजिए। मिर्च, इमली, लहसुन, प्याज, खट्टे पदार्थ, तेल, सरसों तथा हींग का त्याग कीजिए। मिताहार कीजिए। आवश्यकता से अधिक खा कर पेट पर बोझ न डालिए। वर्ष में एक या दो बार एक पखवाड़े के लिए उस वस्तु का परित्याग कीजिए जिसे मन सबसे अधिक पसन्द करता है। सादा भोजन कीजिए। दूध तथा फल एकाग्रता में सहायक होते हैं। भोजन को जीवन-निर्वाह के लिए औषधि के समान लीजिए। भोग के लिए भोजन करना पाप है। एक माह के लिए नमक तथा चीनी का परित्याग कीजिए। बिना चटनी तथा अचार के केवल चावल, रोटी तथा दाल पर ही निर्वाह करने की क्षमता आपमें होनी चाहिए। दाल के लिए और अधिक नमक तथा चाय, काफी और दूध के लिए और अधिक चीनी न माँगिए।

५. **ध्यान-कक्ष**—ध्यान-कक्ष अलग होना चाहिए। उसे तालेकुंजी से बन्द रखिए।

६. **दान**—प्रतिमाह अथवा प्रतिदिन यथाशक्ति नियमित रूप से दान दीजिए अथवा एक रुपये में दस पैसे के हिसाब से दान दीजिए।

७. **स्वाध्याय**—गीता, रामायण, भागवत, विष्णुसहस्रनाम, आदित्यहृदय, उपनिषद्, योगवासिष्ठ, बाइबिल, जेन्दअवस्ता, कुरान आदि का आधा घण्टे तक नित्य स्वाध्याय कीजिए तथा शुद्ध विचार रखिए।

८. **ब्रह्मचर्य**—बहुत ही सावधानीपूर्वक वीर्य की रक्षा कीजिए। वीर्य विभूति है। वीर्य ही सम्पूर्ण शक्ति है। वीर्य ही सम्पत्ति है। वीर्य जीवन, विचार तथा बुद्धि का सार है।

९. **स्तोत्र-पाठ**—प्रार्थना के कुछ श्लोकों अथवा स्तोत्रों को याद कर लीजिए। जप अथवा ध्यान आरम्भ करने से पहले उनका पाठ कीजिए। इससे मन शीघ्र ही समुन्नत हो जायेगा।

१०. **सत्संग**—निरन्तर सत्संग कीजिए। कुसंगति, धूम्रपान, मांस, शराब आदि का पूर्णतः त्याग कीजिए। बुरी आदतों में न फँसिए।

११. **व्रत**—एकादशी को उपवास कीजिए या केवल दूध तथा फल पर निर्वाह कीजिए।

१२. **जप-माला**—जप-माला को अपने गले में पहनिए अथवा जेब में रखिए। रात्रि में इसे तकिये के नीचे रखिए।

१३. **मौन-व्रत**—नित्यप्रति कुछ घण्टों के लिए मौन-व्रत कीजिए।

१४. **वाणी-संयम**—प्रत्येक परिस्थिति में सत्य बोलिए। थोड़ा बोलिए। मधुर बोलिए।

१५. **अपरिग्रह**—अपनी आवश्यकताओं को कम कीजिए। यदि आपके पास चार कमीजें हैं, तो इनकी संख्या तीन या दो कर दीजिए। सुखी तथा सन्तुष्ट जीवन बिताइए। अनावश्यक चिन्ताएँ त्यागिए। सादा जीवन व्यतीत कीजिए तथा उच्च विचार रखिए।

१६. **हिंसा-परिहार**—कभी भी किसी को चोट न पहुँचाइए **(अहिंसा परमो धर्मः)**। क्रोध को प्रेम, क्षमा तथा दया से नियन्त्रित कीजिए।

१७. **आत्म-निर्भरता**—सेवकों पर निर्भर न रहिए। आत्म-निर्भरता सर्वोत्तम गुण है।

१८. **आध्यात्मिक डायरी**—सोने से पहले दिन-भर की अपनी गलतियों पर विचार कीजिए। आत्म-विश्लेषण कीजिए। दैनिक आध्यात्मिक डायरी तथा आत्म-सुधार रजिस्टर रखिए। भूतकाल की गलतियों का चिन्तन न कीजिए।

१९. **कर्तव्य-पालन**—याद रखिए, मृत्यु हर क्षण आपकी प्रतीक्षा कर रही है। अपने कर्तव्यों का पालन करने में न चूकिए। सदाचारी बनिए।

२०. **ईश-चिन्तन**—प्रातः उठते ही तथा सोने से पहले ईश्वर का चिन्तन कीजिए। ईश्वर को पूर्ण आत्मार्पण कीजिए।

यह समस्त आध्यात्मिक साधनाओं का सार है। इससे आप मोक्ष प्राप्त करेंगे। इन नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करना चाहिए। अपने मन को ढील न दीजिए।

Registrar of Newspapers for India
No. 71610/1999

Postal-Registration No. TRI/005/2018-20

LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
(Licence No. WPP No. 02/18-20, Valid upto: 31-12-2020)
Posted at Shivanandanagar, Tehri-Garhwal, Uttarakhand
DATE OF POSTING : 20TH OF EVERY MONTH:
P.O. SHIVANANDANAGAR—249192

अक्तूबर २०२०

गुरु और शिष्य

साधक की योग्यता

अमरत्व की प्राप्ति का साधक कौन हो सकता है ?

जिसने सांसारिक विकारों को हटा दिया है, प्रापंचिकता और सर्व प्रकार की ऐहिक आसक्तियों को दूर कर दिया है, वही योग-पथ पर चलने का अधिकारी है। उसके स्वभाव में पवित्रता तथा जीवन में शुचिता होनी चाहिए।

जिसने प्रचुर तपस्या द्वारा सारे पापों को धो दिया हो, जो शान्त और वीतराग पुरुष हो तथा जिसमें जन्म-मरण-रूपी संसार-चक्र से मुक्त होने की उत्कटता हो, वही वेदान्त-ग्रन्थों और आत्मज्ञान परक पुस्तकों का अध्ययन कर सकता है। ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि आध्यात्मिक साधक विभिन्न तपस्याओं के द्वारा निष्पाप हो जाये, शान्त-चित्त बने, समस्त आसक्तियों से मुक्त हो, इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण करे, गुरु और वेद के प्रति प्रबल निष्ठा रखे और मुक्ति के लिए छटपटाहट अनुभव करे। ऐसा व्यक्ति ही किसी ब्रह्मनिष्ठ गुरु के पास जा कर मार्गदर्शन प्राप्त करने का अधिकारी है।

संसार और सांसारिक विषयों के प्रति वैराग्य और परमेश्वर तथा आध्यात्मिक साधना के प्रति प्रेम बढ़ने दीजिए।

—स्वामी शिवानन्द

सेवा में

'द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी' की ओर से स्वामी अद्वैतानन्द द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से मुद्रित तथा 'द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्य कार्यालय, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से प्रकाशित। फोन : ०१३५-२४३००४०, २४३११९०

E-mail: generalsecretary@sivanandaonline.org ; Website : www.sivanandaonline.org ; www.dlshq.org

सम्पादक : स्वामी निर्लिप्तानन्द